Fortnightly per copy Rs. 4/- only

ओ३म्

18th November 2018

आर्य जीवन
ఆర్య జీవన్

संस्कृति संरक्षण व सामाजिक परिवर्तन का संकल्प

హిందీ - తెలుగు ద్విభాషా పక్ష పత్రిక

Date of Publication 2nd & 17th of every Month, Date of posting 3rd & 18th of every month

पंजाब केसरी लाला लाजपत राय स्वतंत्रता सेनानी पुण्य तिथि विशेष

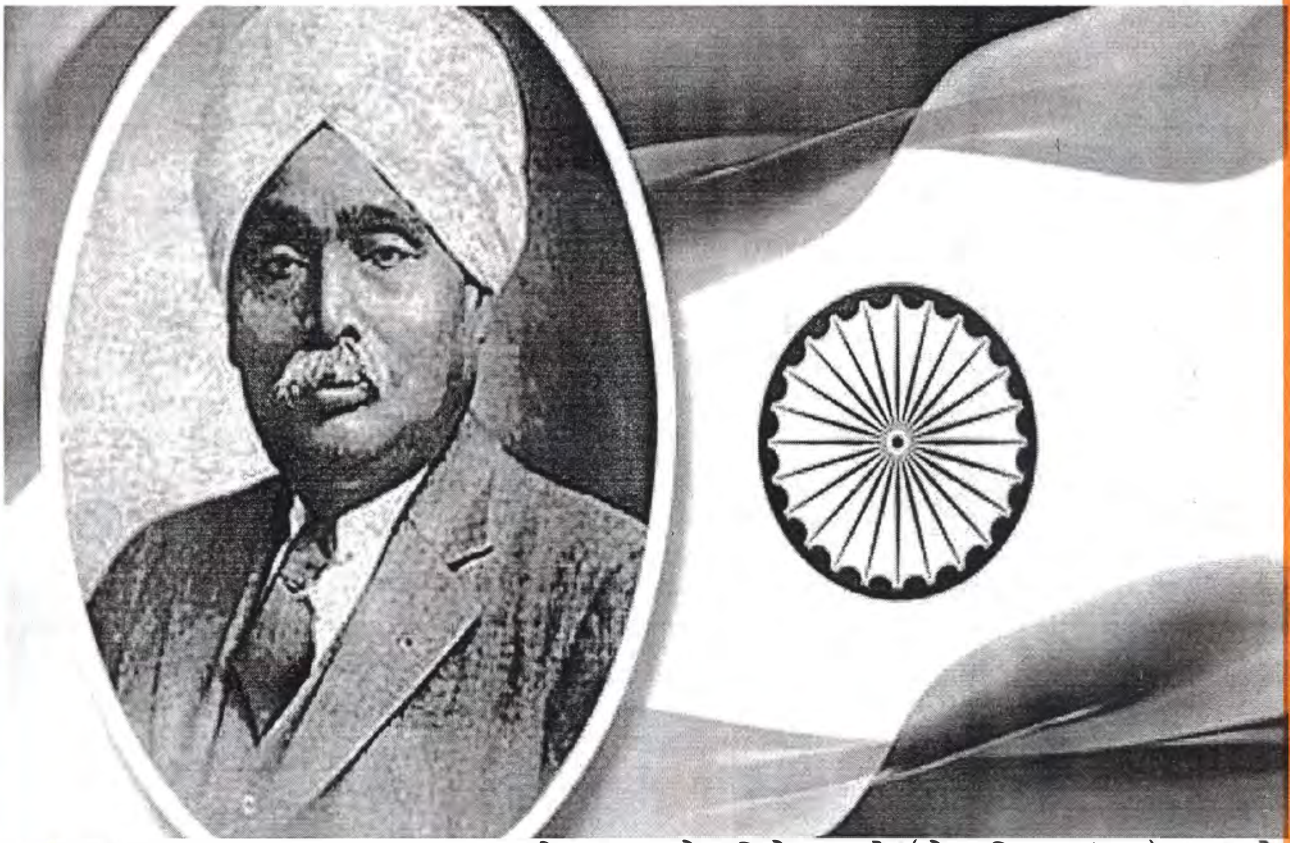

लाला लाजपत राय का जन्म २८ जनवरी १८६५ को धुडिके ग्राम में (मोगा जिला, पंजाब) हुआ। वे भारत को एक पूर्ण हिंदु राष्ट्र बनाना चाहते थे)। हिंदुत्वता, जिसपे वे भरोसा करते थे, उसके माध्यम से भारत में शांति बनाये रखना चाहते थे और मानवता को बढ़ाना चाहते थे। ताकि भारत में लोग आसानी से एक-दुसरे की मदद करते हुए एक-दुसरे पर भरोसा कर सकें, क्योंकि उस समय भारतीय हिंदु समाज में भेदभाव, उंच-नीच जैसी कई कु-प्रथाएं फैली हुई थी, लाला लाजपत राय इन प्रथाओं की प्रणाली को ही बदलना चाहते थे। अंत में उनका अभ्यास सफल रहा और वे भारत में एक अहिंसक शांति अभियान बनाने में सफल रहे और भारत को स्वतंत्र राष्ट्र बनाने के लिए यह बहुत जरुरी था। वे आर्य समाज के भक्त और आर्य राजपत्र (जब वे विद्यार्थी थे तब उन्होंने इसकी स्थापना की थी) के संपादक भी थे। सरकारी कानून (लॉ) विद्यालय, लाहौर में कानून (लॉ) की पढाई पूरी करने के बाद उन्होंने लाहौर और हिस्सार में अपना अभ्यास शुरू रखा और राष्ट्रीय स्तर पर दयानंद वैदिक स्कूल की स्थापना भी की, जहा वे दयानंद सरस्वती जिन्होंने हिंदु सोसाइटी में आर्य समाज की पुनर्निर्मिति की थी, उनके अनुयायी भी बने।

भारतीय राष्ट्रिय कांग्रेस मे शामिल होने के बाद, उन्होंने पंजाब के कई सारे राजनैतिक अभियानों में हिस्सा लिया। मई १९०७ में अचानक ही बिना किसी पूर्वसूचना के मांडले, बर्मा (म्यांमार) से उन्हें निर्वासित (देश से निकाला गया) किया गया। वही नवम्बर में, उनके खिलाफ पर्याप्त सबूत ना होने की वजह से वाइसराय, लॉर्ड मिन्टो ने उनके स्वदेश वापिस भेजने का निर्णय लिया। स्वदेश वापिस आने के बाद लाला लाजपत राय सूरत की प्रेसीडेंसी पार्टी से चुनाव लड़ने लगे लेकिन वहा भी ब्रिटिशो ने उन्हें निष्कासित कर दिया।

१९२१ में उन्होंने समाज की सेवा करने के उद्देश्य से लाहौर में एक संस्था की स्थापना की लेकिन विभाजन के बाद वो दिल्ली में आ गयी, और भारत के कई राज्यों में उस संस्था की शाखाये भी खोली गयी। लाला लाजपत राय का हमेशा से यही मानना था की "मनुष्य अपने गुणों से आगे बढ़ता है न की दुसरों की कृपा से"

स्वामी दयानंद सरस्वती ने स्थापन किया हुवा 'आर्य समाज' सार्वजनिक कार्य आगे था। आर्य समाज के विकास के आदर्श की तरफ और समाज सुधार के योजनाओं की तरफ लालाजी आकर्षित हुए। वो सोलाह साल की उम्र में आर्य समाज के सदस्य बने। १८८६ में कानून की उपाधि परीक्षा देकर दक्षिण पंजाब के हिस्सार में उन्होंने वकील का व्यवसाय शुरु किया। १८८६ में लाहौर के आर्य समाज की तरफ से दयानंद एँग्लो-वैदिक कॉलेज १ जून १८८६ की स्थापना हुयी। लालाजी उसके सचिव बने। आर्य समाज के अनुयायी बनकर वो अनाथ बच्चे, विधवा, भूकंपग्रस्त पीडीत और अकाल से पीड़ित इन लोगों की सहायता करते थे। १९०४ में 'द पंजाब' नाम का अंग्रेजी अखबार उन्होंने शुरु किया। इस अखबार ने पंजाब में राष्ट्रीय आन्दोलन शुरु किया। १९०७ में लाला लाजपत राय को सरकार के विरोध में भड़काने के आरोप में सरकार ने उन्हें मंडाले के जेल में रखा था। ६ महीनों बाद उनको छोड़ा गया पर उनके पीछे लगे हुये सरकार से पीछा छुड़ाने के लिये वो अमेरिका गये। वहाँ के भारतीयों में स्वदेश की, स्वातंत्र्य को लालच निर्माण करने के उन्होंने 'यंग इंडिया' ये अखबार निकाला। वैसे ही भारतीय स्वातंत्र्य आंदोलन का गति देने के लिये 'इंडियन होमरूल लीग' की स्थापना की। स्वदेश के विषय में परदेश के लोगों में विशेष जागृति निर्माण करके १९२० में वो अपने देश भारत लौटे। १९२० में कोलकाता में कांग्रेस के खास अधिवेशन के लिये उन्हें अध्यक्ष के रूप में चुना गया। उन्होंने असहयोग आंदोलन में हिस्सा लिया और जेल गए. उसके पहले लालाजी ने लाहोर में 'तिलक राजनीति शास्त्र स्कुल' नाम की राष्ट्रीय स्कुल शुरु किया था। लालाजी ने 'पीपल्स सोसायटी' (लोग सेवक संघ) नाम की समाज सेवक की संस्था निकाली थी। १९२५ में कोलकाता में हुये 'हिंदु महासभा' के आन्दोलन के अध्यक्ष बने व १९२५ में 'वंदे मातरम' नाम के उर्दू दैनिक के संपादक बने। १९२६ में जिनिवा में अंतरराष्ट्रीय श्रम सम्मेलन हुवा। भारत के श्रमिको के प्रतिनिधि बनकर लालाजी ने उसमें हिस्सा लिया। ब्रिटेन और फ्रान्स में सम्मेलन में भी हिस्सा लिया। १९२७ में ब्रिटिश सरकार ने सायमन कमीशन की नियुक्ति की, पर सायमन कमीशन सातों सदस्य अग्रेंज थे। एक भी भारतीय नहीं था। इसलिये भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने सायमन कमीशन का बहिष्कार किया। १९२८ में सायमन कमीशन पंजाब आया। लोगों ने लाला लाजपत राय के नेतृत्व में निषेध के लिये मोर्चा निकाला। पुलिस के निर्दयी लाठीचार्ज में लाला लाजपत राय घायल हुये और दो सप्ताह के बाद अस्पताल में १७.११.१९२८ में उनका निधन हुआ।

"मनुष्य का मानव और दानव बनना उसके अपने हाथों में हैं"

–मनमोहन कुमार आर्य

ससार में हम अनेक प्राणियों को देखते हैं। दो पैर और दो हाथ वाला प्राणी जो भूमि पर सीधा खड़ा होकर व सिर ऊंचा उठाकर चलता है, जिसके पास बुद्धि है और जो सोच विचार कर अपने काम करता है, उसे मनुष्य कहते हैं। मनुष्य की विशेषता यह है कि उसके पास एक आत्मा और बुद्धि है। मनुष्य का अपना एक सूक्ष्म शरीर होता है जिसमें पांच ज्ञाने न्द्रियां, पांच कर्म इन्द्रियां, मन, बुद्धि, चित्त एवं अहंकार आदि उपकरण होते हैं। मनुष्य योनि में बुद्धि सोच विचार कर उचित अनुचित, कर्तव्य-अकर्तव्य, अच्छे-बुरे का विचार कर अपने हित-अहित के अनुसार कार्य करती है। मनुष्य अच्छे काम करके श्रेष्ठ व बुरे काम करके हेय बनता है। बुरे गुणों वाले मनुष्यों को कोई पसन्द नहीं करता। प्रश्न है कि क्या बुरा मनुष्य भी अच्छा बन सकता है तो इसका उत्तर हमें हां में मिलता है। बुरा मनुष्य भी चाहे तो वह सत्याचरण अर्थात् धर्म को धारण कर देव कोटि का अच्छा मनुष्य बन सकता है। इसके लिये उसके माता-पिता, आचार्य आदि व उसे स्वयं क्या करना होता है यह विचारणीय है।

मनुष्य के पास बुद्धि है जिसका विषय ज्ञान होता है। ज्ञान प्राप्ति के लिये योग्य व श्रेष्ठ गुरुओं, धार्मिक ज्ञानी माता-पिताओं, सगे सम्बन्धियों व श्रेष्ठ साहित्य की आवश्यकता होती है। संगति का भी मनुष्य पर प्रभाव पड़ता है। अतः अच्छा मनुष्य बनने के लिये मनुष्य को अच्छे लोगों की ही संगति करनी होती है। यदि वह अपनी संगति पर ध्यान नहीं देंगे और बुरे व्यक्तियों की संगति करेंगे तो निश्चय ही वह अच्छे नहीं बन सकते। उनमें बुरे लोगों के संग से बुराईयां अवश्य ही आयेंगी। मनुष्य को बुराईयों से बचाने के लिये माता-पिता का धार्मिक विद्वान होना चाहिये। धार्मिक विद्वान से अभिप्राय है कि वह किसी मत-मतान्तर को मानने वाला न होकर सत्य मान्यताओं, सत्य सिद्धान्तों और सदाचारी व धार्मिक विद्वानों के मार्ग पर चलने वाले हों। ईश्वर के सत्यस्वरूप को जानते हों और ईश्वरोपासना आदि कर्तव्यों का निर्वाह करते हों। धर्म का प्रमुख ग्रन्थ केवल वेद है और वेद के अनुकूल ग्रन्थों की शिक्षाओं को ही हमें जानना व उनका आचरण करना चाहिये। संसार व देश में अनेक मत-मतान्तर प्रचलित हैं। उन्हें धर्म कदापि नहीं कह सकते। धर्म उसे कहते हैं जिसमें शत-प्रतिशत सत्य सत्य मान्यताओं और सिद्धान्तों का विधान हो। किसी भी असत्य व मिथ्या मान्यता का विधान धर्म में नहीं होता है। ऐसा धर्म केवल वैदिक धर्म ही है। हम जब मत-मतान्तरों पर दृष्टि डालते हैं तो मनुष्यों द्वारा अस्तित्व में आये सभी मत-मतान्तरों में अवैदिक, मिथ्या व असत्य मान्यतायें एवं परम्पराओं की भरमार देखते हैं।

महर्षि दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में वैदिक मत की मान्यताओं व सिद्धान्तों पर प्रकाश डाला है। वैदिक मत की परीक्षा करने पर परिणाम निकला है कि इसकी कोई मान्यता असत्य नहीं है। इस कारण वेद की सभी मान्यतायें अखण्डनीय एवं सत्य हैं। यह भी जान लेना चाहिये कि वैदिक मत किसी मनुष्य, ईश्वर पुत्र व ईश्वर के सन्देश वाहक द्वारा प्रवर्तित नहीं है अपितु वेदों का ज्ञान सृष्टि के आरम्भ में सृष्टिकर्ता ईश्वर ने ही दिया था। वेद में सभी सत्य विद्यायें बीज रूप वा संक्षिप्त रूप में हैं। इसके साथ ही ईश्वर व जीवात्मा की वेदों में विस्तार से चर्चा मिलती है। वेदों की कोई मान्यतता असत्य, सृष्टिक्रम के विरुद्ध, सत्य ज्ञान के विपरीत व युक्ति व तर्क के विपरीत नहीं है। इसके विपरीत कोई मत यह दावा नहीं करते कि उनके धर्म व मत-ग्रन्थ की पुस्तकें सब सत्य विद्याओं से युक्त हैं। सभी मतों में अविद्या व अज्ञान की अनेक बातें विद्यमान हैं। अतः अधूरे ज्ञान, मिथ्या मान्यताओं व परम्पराओं के ग्रन्थ होने से मत-मतान्तरों के द्वारा मनुष्य का कल्याण नहीं होता। मनुष्य को मांसाहार, अण्डों का सेवन, मछली का सेवन, धूम्रपान व तम्बाकू का सेवन, मदिरा पान व नशा आदि कदापि नहीं करने चाहियें। यह पाप कर्म हैं जिसका ईश्वर मनुष्य को दुःख के रूप में दण्ड देता है। देश में ऐसे अनेक मत हैं जहां इन बातों को बुरा नहीं माना जाता अपितु इनकी प्रेरणा भी कई मतों में की गई है। इसका कारण अविद्या है। अतः मत-मतान्तरों की मान्यताओं का आचरण करने से मनुष्य साधारण मनुष्य ही बन कर रह जाता है। ऐसा मनुष्य अनेक अधर्म व पाप के काम भी कर सकता है व करता है जिससे धार्मिक व सज्जन मनुष्यों को कष्ट होता है। ऐसे पापमय लोगों के पाप व दुष्कृत्यों

को कुचलने में लिये कठोर नियम वं कानून होने चाहियें परन्तु ऐसे लोगों को व्यवस्था से अपने पापों का उचित व कठोर दण्ड न मिलने से मानव समाज श्रेष्ठ समाज नहीं बन पा रहा है। आज के समाज में आर्थिक व चारित्रिक भ्रष्टाचार एवं परिग्रह की भावना अधिक पाई जाती है। लोगों में दुःखी व निर्धन तथा दुर्बलों के प्रति सेवा व सहायता की भावना के दर्शन कम ही होते हैं। समाज में निर्बलों का शोषण और अन्याय देखने को मिलता है। अतः यही कहा जा सकता है कि समाज में देव कोटि के अच्छे मनुष्य कम ही हैं। अच्छा मनुष्य कैसे बन सकता है, इस पर विचार करते हैं।

मनुष्य सद्‌गुणों व संस्कारों से युक्त हो इसके लिये वैदिक सत्य धर्म में १६ संस्कारों का विधान किया गया है। यह सोलह संस्कार गर्भाधान से आरम्भ होकर मृत्यु होने पर अन्त्येष्टि संस्कार के रूप में सम्पन्न होते हैं। सन्तान के प्रसव से पूर्व वैदिक परिवारों के माता-पिताओं को श्रेष्ठ सन्तान की प्राप्ति के लिये अनेक नियमों व व्रतों का पालन करना होता है। उन्हें सत्य नियमों का पालन करते हुए संयम व पवित्रता से युक्त जीवन व्यतीत करना होता है। उन्हें अपने मन को श्रेष्ठ धार्मिक विचारों से युक्त रखना होता है। प्रातः व सायं ईश्वर का ध्यान, चिन्तन, मनन, स्वाध्याय, अग्निहोत्र, माता- पिता व आचार्यों की सेवा आदि करनी होती है। शुद्ध व पवित्र भोजन करना होता है। घर व आस पास का वातावरण भी शुद्ध व पवित्र तथा उपद्रव रहित होना चाहिये। गर्भस्थ सन्तान इस अवधि में माता-पिता के जीवन की बातों व गुणों को ग्रहण करता है और उसके अनुरूप ही वह बनता है। जन्म के बाद भी बालक को ज्ञान व सदाचरण की शिक्षा माता-पिता व आचार्य आदि दिया करते हैं। बुरे कार्यों के बुरे परिणामों से भी उसे अवगत कराया जाता है। वैदिक शिक्षा गुरुकुल में धार्मिक, संयमी, निर्लोभी, शिष्यों को माता-पिता के समान पालन करने वाले, महत्वाकांक्षा से रहित, सच्चरित्र विद्वान आचार्यों द्वारा दी जाती थी। आजकल ऐसे आचार्यों का स्कूल व कालेजों सहित सर्वत्र अभाव है। वातावरण का भी ऐसा प्रभाव है कि आजकल के बच्चे आध्यात्म व वेद प्रचार के मार्ग पर न चलकर धनोपार्जन व सरकारी नौकरी आदि को ही प्राथमिकता देते हैं। इससे समाज में असन्तुलन बढ़ रहा है। देश भर का समस्त धन कुछ हजार व लाख लोगों की जेबों व तिजोरियों की ही शोभा बढ़ाता है जिससे सामाजिक असन्तुलन एवं अनेक समस्यायें उत्पन्न होती हैं। देश के बाह्य शत्रु भी नागरिकों को प्रलोभन देकर व अन्य प्रकार से उन्हें अपने पक्ष में करके देश में अस्थिरता उत्पन्न करते रहते हैं। देश के बहुत से प्रभावशाली महत्वांकाक्षी लोग भी ऐसे देश विरोधी कार्यों की उपेक्षा करते हैं और शासक दल के अच्छे कार्यों की भी आलोचना करने के साथ उनमें बाधायें खड़ी करते हैं। इन कारणों से भी समाज में अच्छे चरित्रचवान् लोगों की संख्या जो ९० से ९५ प्रतिशत होनी चाहिये वह अति न्यून होती है।

वेद और वैदिक साहित्य मनुष्य को देव कोटि का देवता व महापुरुष बनाता है। सन्ध्या व अग्निहोत्र तथा पितृ यज्ञ आदि से भी मनुष्य सन्मार्गगामी होकर देव बनता है। योग से भी वही लाभ होते हैं जो वैदिक सन्ध्या से होते हैं। आसन योग का एक अंग है परन्तु बहुत से लोग आसनों को ही योग मान लेते हैं। योग तो ध्यान व समाधि को कहते हैं। यदि आसन कर हम ध्यान व समाधि की ओर नहीं बढ़ते तो योग से अधिक लाभ नहीं होता। अतः मनुष्य को वैदिक शिक्षा और संस्कार देकर व सत्पुरुषों की संगति व आर्यसमाज के सत्संगों के माध्यम से साधारण मनुष्यों को देव कोटि का मनुष्य बनाया जा सकता है। जो मनुष्य सन्ध्या, योग, अग्निहोत्र, वेद आदि ग्रन्थों के स्वाध्याय से दूर होगा वह अपने जीवन व चरित्र की भली प्रकार से रक्षा नहीं कर सकता। वैदिक मान्यता के अनुसार एक साधारण व अपराधी कोटि का मनुष्य भी वैदिक धर्म की शरण में आकर देवता बन सकता है। इतिहास में इसके अनेक उदाहरण हैं। आचार्य चाणक्य ने अपने योग्यता, बुद्धि, ज्ञान व चरित्र बल से चन्द्रगुप्त मौर्य को आदर्श व शक्तिशाली राजा महाराज विक्रमादित्य बना दिया था। गुरु विरजानन्द ने स्वामी दयानन्द को ऋषि दयानन्द तथा ऋषि दयानन्द और उनके साहित्य ने स्वामी श्रद्धानन्द, पं. लेखराम, पं. गुरुदत्त विद्यार्थी महात्मा हंसराज और स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती आदि का निर्माण किया। आर्यसमाज की विचारधारा के सम्पर्क में आकर भी अनेक चोर व डाकू तथा भ्रष्ट पटवारी आदि भी दुष्कर्मों का त्याग कर आर्य व देवता बने हैं। अतः श्रेष्ठ मनुष्य बनने तथा अपने इहलोक व परलोक को सुधारने के लिये सभी मनुष्यों को वेद और आर्यसमाज को अपनाना चाहिये। इनकी अच्छी शिक्षा व संस्कारों से मनुष्य का मन व बुद्धि शुद्ध होकर व सभी बुराईयों के त्याग से वह सच्चा व श्रेष्ठ मानव अथवा देवता बन सकता है। ओ३म् शम्।

अथर्ववेद के कौशिक-कृत विनियोगों पर एक दृष्टि

-आचार्य रामनाथ वेदालङ्कार

अथर्ववेद के सम्बन्ध में दुर्भाग्य से यह धारणा बद्धमूल हो चुकी है कि यह जादू-टोनों का वेद है । भारतीय और पाश्चात्त्य दोनों ही क्षेत्रों के विद्वानों के मुख से यही बात सुनने को मिलती है । प्रो. मैकडानल ने अपने ग्रन्थ 'संस्कृत लिटरेचर' में ऐसे ही भाव प्रकट किये हैं । इसके प्रभाव से दासगुप्ता, सर्वपल्ली राधाकृष्णन, पं. बलदेव उपाध्याय आदि अनेक भारतीय विद्वान् भी अछूते नहीं रहे हैं । सबके मुख से और सबकी लेखनी से अथर्ववेद के जादू-टोने की बात सुनते-पढ़ते वेद को गरिमामय गम्भीर ज्ञान की पवित्र पुस्तक मानने वाले भी इस जादू-टोने की बात से प्रभावित हो रहे हैं । जब विश्वविद्यालयों में यही पढ़ाया जाता है, पाठ्यक्रम में निर्धारित पुस्तकों में यही लिखा मिलता है, तब अपारिपक्व मस्तिष्क इससे प्रभावित क्यों न हो । यही कारण है कि एम.ए. तथा पी-एच.डी. के परीक्षार्थी भी जबरदस्ती अथर्ववेद को जादू-टोने का वेद सिद्ध करने में लगे हैं । एक परीक्षक के रूप में मेरा यह अनुभव रहा है ।

एक विश्वविद्यालय की शोध-समिति में विशेषज्ञ के रूप में मैं बुलाया गया था, जिसमें शोधार्थियों के शोध-विषयों की रूपरेखाएँ परखी जाती हैं । उसमें शोध का एक विषय अथर्ववेद पर भी था । विषय-सूची में अधिकतर मारण-उच्चाटन, कृत्या-अभिचार, जादू-टोने आदि की ही बातें थीं । मैंने उस पर आपत्ति उठायी कि क्या अथर्ववेद पर यही पृष्ठभूमि छात्र को शोध के लिए देना अथर्ववेद और छात्र दोनों के प्रति अन्याय नहीं है । एक अन्य विशेषज्ञ ने उस पर यह टिप्पणी की कि आप अथर्ववेद में इन बातों को नहीं मानते हैं, पर वस्तुतः है तो अथर्ववेद में यही सब । अन्त में एक तीसरे विशेषज्ञ के मेरे साथ सहमत हो जाने से उस रूपरेखा में संशोधन करने की बात मान ली गयी ।

यदि अथर्ववेद में जादू-टोना होने की बात मिथ्या है, तो इस मिथ्या प्रपञ्च को प्रचलित करने का दोषी कौन है ? प्रायः इसका दोष विदेशी वेद-विचारकों को दे दिया जाता है । हम उनका नाम ले-लेकर उनके प्रति अपना आक्रोश प्रकट करते हैं । पर मौलिक अपराध तो उसी भारतीय मस्तिष्क का है जो एक और तो वेदों की ईश्वरीय वाणी के रूप में पूजता है और दूसरी ओर ऐसी भ्रान्त धारणाओं को जन्म देता है । वैदिक ऋचाओं को रहस्यमय ज्ञान के अजस्र स्त्रोत मानने वाले योगी श्री अरविन्द ने अपनी 'वेदरहस्य' पुस्तक में लिखा है कि 'यह मेरा सौभाग्य था कि मैंने वेद का सायणभाष्य पहले नहीं पढ़ा था । अन्यथा सम्भव है मैं उसी प्रवाह में बह जाता और वेदों में जिस आध्यात्मिक तत्त्व के दर्शन मैंने किये हैं उसे न र पाता ।' और वास्तव में मूल दोष सायण का भी नहीं है, उसका दोष इतना ही है कि उसने वेदों पर स्वतन्त्र विचार न कर पुराने विनियोगों को, चाहे वे तर्कसंगत थे चाहे अतर्कसंगत, उसी रूप में स्वीकार कर लिया । श्री अरविन्द के शब्दों में ''सायण ने पुरानी मिथ्या धारणाओं पर प्रामाणिकता की मुहर लगा दी, जो कई शताब्दियों तक नहीं टूट सकती थी ।''

यहाँ हम अथर्ववेद की बात कर रहे हैं । अथर्ववेदविषयक समस्त भ्रान्तियों के प्रमुख जन्मदाता है कौशिक, जिन्होंने अपने कौशिकसूत्र में अनेक विनियोग ऐसे किये हैं, जिनसे अथर्ववेद का एक भ्रान्त मिच्त पाठक के सम्मुख उपस्थित होता है । सायण ने अथर्ववेद-भाष्य के अपने उपोद्घात में कौशिकसूत्र, वैतानसूत्र, शान्तिकल्प, आंगिरसकल्प तथा अथर्वपरिशिष्ट में प्रतिपादित प्रमुख अथर्ववेदीय विषयों का परिगणन किया है तथा लिखा है कि इतर सूत्रों का उपजीव्य होने के कारण कौशिकसूत्र ही सबसे प्रधान है । कौशिकसूत्र ने जो विनियोग दिये हैं, उनमें से अधिकांश जादू-टोने या मन्त्र-मन्त्र की कल्पना से ओत-प्रोत हैं । क्योंकि सायणभाष्य के उपजीव्य ये ही विनियोग हैं, अतः सायण का इस प्रचार में बहुत बड़ा हाथ है । भाष्यारम्भ करते हुए सायण ने स्वयं लिखा है-

शाखायाः शौनकीयायाः पूर्वोक्तेष्वेव कर्मसु ।
विनियोगाभिधानेन संहितार्थः प्रकाश्यते ।।

अर्थात् कौशिकसूत्र आदि में प्रोक्त कर्मों में ही विनियोग दिखला कर मैं अथर्ववेद की शौनकीय संहिता का अर्थ प्रकाशित करूँगा ।

यदि सायण सौशिक के प्रचारक न बन कर स्वतन्त्र रूप से अपना भाष्य करते तो सम्भवतः अथर्ववेद के जादू-टोने का वेद होने की आँधी इतनी जोर से न फैलती । कौशिक का प्रचार सायण ने किया और उसी प्रचार को आगे बढ़ाया पाश्चात्त्य विचारकों ने तथा उनका अविवेकपूर्ण अनुकरण करने वाले भारतीयों ने । जो पाठक कौशिक के विनियोगों को बिना देखे अपनी बुद्धि से मूल अथर्ववेद को पढ़ेगा उसके मन में कौशिककृत विधि-विधान कभी नहीं आ सकते, यह कौशिकीय विनियोगं के काल्पनिक तथा स्वेच्छाप्रसूत होने में प्रबल युक्ति है । वस्तुतः विनियोगकार अपने विनियोगों के लिए स्वयं उत्तरदायी होता है, वेद पर उसका उत्तरदायित्व नहीं है ।

इतनी भूमिका के पश्चात् अब हम कतिपय मन्त्र-तन्त्र-मूलक कौशिकीय विनियोगों का दिग्दर्शन करायेंगे तथा यह भी देखेंगे कि जिस सूक्त या मन्त्र पर वे विनियोग लिखे हैं उस सूक्त या मन्त्र से क्या वे प्रमाणित होते हैं । उन विनियोंगो पर दृष्टिपात करने से यह तथ्य सामने आ जाएगा कि चाहे राज्याभिषेक, सेना-प्रोत्साहन, शत्रुविजय आदि राजकर्मसम्बन्धी सूक्त हों, चाहे ऐश्वर्य वृद्धिपरक सूक्त हों, चाहे गोसमृद्धि विषयक सूक्त हों, चाहे चिकित्साप्रतिपाद सूक्त हों, चाहे नारीसौभाग्यसूचक सूक्त हों, चाहे वृष्टि, वाणिज्य, कृमिविनाश, आयुष्य आदि के सूक्त हों, सर्वत्र कौशिक मन्त्र-तन्त्र की बात अपनी ओर से कल्पित कर लेता है ।

१) 'अमूर्या यन्ति' अतर्व. १.१७ चार मन्त्रों का सूक्त है । इसमें स्त्रियों के आर्तव का आधिक्य, नाड़ियों से रक्तस्त्राव, पथरी के कारण रक्तस्त्राव आदि के निरोध का वर्णन है । कौशिक का विनियोग इस प्रकार है-शस्त्रघात आदि से उत्पन्न रूधिर-प्रवाह तथा स्त्री के रजोधर्म के अतिप्रवाह की निवृत्ति के लिए पाँच पर्वों वाले दण्ड से रुधिरवहनस्थान को अभिमन्त्रित करे, व्रण के मुख पर गली की धूल, रेत आदि प्रक्षित करे, सूखी कीचड़ या खेत की क्यारी की मिट्टी बाँधे और पिलाये । मन्त्रों में यह प्रक्रिया कहीं वर्णित नहीं हुई है । वैध्यगण उत्कृष्ट ओषधियों के द्वारा रक्तप्रवाह को रोकनेका इससे अच्छा विनियोग कर सकते हैं, जिसमें अबिमन्त्रित करने की कोई बात न हो । निश्चय ही उनका प्रयोग अधिक सफल होगा ।

२) 'वेनस्ततू पश्यतू' अथर्व. २.१ पाँच मन्त्रों सूक त है, जिसमें ब्रह्म की महिमा वर्णित की गयी है और यह कहा गया है कि मेधावी और दीप्तप्रज्ञ मनुष्य ही उसका दर्शन कर सकता है तथा वेदज्ञ एवं वाणी पर अधिकार रखने वाला व्यक्ति ही उसका प्रवचन करने में समर्थ होता है। कौशिक ने इसका विनियोग 'मनोवांछित फल सिद्ध होगा या असिद्ध' इसका पता लगाने में किया है- ''पाँच पर्वों वाला वेणुदण्ड, काम्पील वृक्ष की शाका या स्थयुग को इस सूक्त के मन्त्रों से अभिमन्त्रित करके, अभीष्ट कार्य को मन में सोचकर, समतलन प्रदेश में ऊँचा खड़ा करके छोड़ दे। यदि वे वेणुदण्ड आदि सोची हुई दिशा में गिरें तो कार्यसिद्धि जाने। बाण को धनुष पर सन्धान करके इस सूक्त से अभिमन्त्रित कर अग्नि में छोड़ दें, यदि ज्वाला दक्षिण दिशा में जाए तो इष्टसिद्धि होगी। जुए के पासों को अभिमन्त्रित कर फेंके, अभीष्ट संख्या आये तो कार्यसिद्धि जाने। हाथों की दो अंगुलियाँ अभिमन्त्रित कर कार्य को सोचे, उद्दिष्ट अंगुलि का स्पर्श होने पर अभिलषित सिद्धि समझे।

इसी प्रकार खोये हुये द्रव्य का पता लगाने तथा विवाह से पूर्व कुमारी के सौभाग्यादि की परीक्षा में भी इस सूक्त का विनियोग कौशिक ने किया है। पानी का घड़ा, हल या जुए के पासों को नवीन वस्त्र से लपेट कर सम्पातित तथा अभिमन्त्रित कर जिनका रजोदर्शन प्रारम्भ नहीं हुआ है ऐसी दो कुमारियों को कहे कि इसे ले जाओ। वे जिस दिशा में ले जाएँ, उसी दिशा में खोया हुआ द्रव्य मिलेगा, ऐसा जाने। विवाह से पूर्व कुमारी के सौभाग्यादि लक्षणों के ज्ञान के लिए आकृतिलोष्ठ (क्षेत्रमृत्तिका), वल्मीकलोष्ट, चतुष्पथलोष्ट और श्मशानलोष्ट इन चार प्रकार की मृत्तिकाओं को इस सूक्त से अभिमन्त्रित कर कुमारी को कहे कि इनमें से किसी एक को उठा लो। यदि वह आकृतिलोष्ठ या वल्मीकलोष्ठ को उठाये तो उसका कल्याण होगा, चतुष्पथलोष्ठ को उठाये तो वह बहुचारिणी होगी, श्मशानलोष्ठ को उठाये तो उसकी मृत्यु हो जाएगी, ऐसा जाने। दूसरी यह विधि भी कर सकते हैं कि कुमारी की अञ्जलि में जल भर कर इस सूक्त से अभिमन्त्रित कर उसे कहे कि इच्छानुसार किसी दिशा में इसे फेंक दे। यदि वह पूर्व दिशा में फेंके तो समझे कि उसका कल्याण होगा।''

सूक्त का प्रतिपाध्य विषय प्रारम्भ में हम बता चुके हैं। उससे इन विनियोगों कादूर का भी सम्बन्ध नहीं है। सायण ने भी कौशिसूत्र को उद्धृत करते हुए सूक्त के आरम्भ में ये विनियोग दिये तो हैं, किन्तु मन्त्रार्थ में इनका कोई उपयोग नहीं किया है।

३) 'यथा द्यौश्च पृथिवी च न बिभीतो न रिष्यतः' अथर्व. १.१५ छः मन्त्रों का सूक्त है। इसमें मनुष्य अपने प्राण को सम्बोधित करता हुआ कहता है कि जैसे द्यौ और पृथिवी, सूर्य और चन्द्र, ब्रह्म और क्षत्र, सत्य और अनृत, भूत और भव्य भयभीत नहीं होते, अतएव विनाश को प्राप्त नहीं करते, वैसे ही हे मेरे प्राण, तू भी भयभीत मत हो। कैसा सुन्दर आत्मोद्बोधन है। इस सूक्त का विनियोग यही हो सकता है कि जब हम किसी संकटपूर्ण कार्य को करने लगें, तब इस सूक्त का पाठ करते हुए अपने अन्दर शक्ति-सञ्चय करे, किन्तु कौशिक ने इसका विनियोग किया है कि जिसे दीर्घायुष्य की कामना हो वह इस सूक्त से स्थालीपाक ओदन को शान्त्युदक से संप्रोक्षित तथा अभिमन्त्रित कर खा ले, जिसकी कोई चर्चा सूक्त में नहीं है। यदि कौशिक यह कहता कि दीर्घायुष्य के लिए इस सूक्त का अर्थज्ञानपूर्वक पाठ करता हुआ अपने प्राण को निर्भय और सबल बनाये, तब तो संगत हो सकता था।

४) 'एह यन्तु पशवो' अथर्व. २.२६ पाँच मन्त्रों का सूक्त है। इसमें गोपालन और गौओं के दूध, घी आदि से स्वयं तथा परिवार के अन्य सदस्यों पुत्र, पत्नी आदि के पुष्टि प्राप्त करने का वर्णन है। तदनुसार ही इसका विनियोग होना चाहिए, परन्तु कौशिक कहते हैं कि जिसे गो-पुष्टि की कामना हो वह बछड़े की लार से मिश्रित ताजा दूध इस सूक्त से अभिमन्त्रित करके पी ले, गौ को अभिमन्त्रित करके दान करे तथा जलपात्र को अभिमन्त्रित करके गोष्ट के मध्य में ले जाए। पर इन विधियों से गो-पुष्टि कैसे सम्भव है? गो-पुष्टि तो गो-सेवा से ही हो सकती है।

५) 'संशितं म इदं ब्रह्म संशितं वीर्यं बलम्' अथर्व. ३.१९ आठ मन्त्रों का सूक्त है। इसमें शक्तिसञ्चय करने, शस्त्रास्त्र का बल बढ़ाने, अपने वीरों को उद्बोधन देने एवं शत्रु-विजय करनें का बीरतापूर्ण वर्णन है। इसके कौशिक-प्रोक्त विनियोगों में से एक यह है कि जब शत्रुसेना को उद्वेल्लित करना हो तब इस सूक्त से घृत की आहुति देकर श्वेत पैरों वाली बकरी या भेड़ को अभिमन्त्रित करके शत्रुसेना के प्रति छोड़ दें। सूक्त का वीररसपूर्ण एक मन्त्र इस प्रकार है -

उद्धर्षन्तां मघवन् वाजिनान्युद् वीराणां यजतामेतु घोषः।
पृथग् घोषा उलुलयः केतुमन्त उदीरताम्।
देवा इन्द्रज्येष्ठा मरुतो सेनया॥

-अथर्व. ३.१९.६

अर्थात् 'हे राजन्, आपकी सेना के राजारोही, अश्वारोही, स्थारोही, पदाति सब सैनिकों के बल हर्षित हों। विजय लाभ करते हुए वीरों के सिंहनाद आकाश में गूँजें। पृथक्-पृथक् दलों के झण्डे आकाश में लहरायें। विजयसूचक 'उल्लुलुलु' के घोष ऊपर उठें। ज्येष्ट सेनापति सहित देदीप्यमान, मरने-मारने के लिए तैयार सैनिक सेना बाँद कर चलें।' इसका भला अभिमन्त्रित बकरी को शत्रुसेना के प्रति छोड़ने से क्या सम्बन्ध है।

६) 'सहृदयं सांमनस्यमविद्वेषं कृणोमि वः' अथर्व. ३.३० सात मन्त्रों का सुप्रसिद्ध सूक्त है। इसमें यह भावना व्यक्त की गयी है कि परिवार में सौहार्द, सांमनस्य, अविद्वेष, पारस्परिक प्रीति, पिता-माता-पुत्र, पति-पत्नी, भाई-बहन आदि के बीच मधुर वाणी, प्रेम-व्यवहार, मिल कर खान-पान करना, मिलकर अग्निहोत्र करना आदि होना चाहिए। इसके विनियोग में कौशिक लिखते हैं कि इस सूक्त द्वारा सांमनस्य-कर्म में ग्राम के मध्य सम्पातित जलकुम्भ और सुराकुम्भ को घुमाएँ, त्रिवर्षवत्सिका गौ के मांस-खण्डों का तथा सम्पातित अन्न का भोग और संपातित सुरा का पान करायें। क्या इन क्रियाओं को करने से परस्पर सांमनस्य उत्पन्न हो जाएगा? वस्तुतः सांमनस्य तो तब उत्पन्न हो सकता है, जब परिवार के सदस्य प्रतिदिन अर्थबोधपूर्वक इन मन्त्रों का पाठ करते हुए अपने अन्दर पारस्परिक सौहार्द की भावना को जागरित करें।

७) 'य आत्मदा बलदा' अथर्व. ४.२ सूक्त में आठ मन्त्र हैं, जिनमें देव परमेश्वर की महिमा वर्णित की गयी है कि वह आत्मिक शक्ति और शारीरिक बल का दाता है, उत्तम प्रकाशक है, जड़-चेतन जगत् का राजा है और पृथिवी का धर्ता, लोकलोकान्तरों का निर्माता तथा सृष्टि को उत्पन्न करने वाला है, उसी की पूजा करनी योग्य है। परन्तु

कौशिक ने इसका विनियोग बन्ध्या गौ का वध करके उसे शान्ति प्राप्त कराने तथा उसके अंगों का होम करने में किया है । इस सूक्त का जप करके उसके लिए शान्त्युदक छोड़ें । यदि काटी हुई उस गौ का अचानक गर्भ दीख जाए तो उस गर्भ को अञ्जलि में लेकर इस सूक्त से अग्नि में आहुति दें । देखिए, सूक्त के साथ कैसा अत्याचार किया गया है ।

८) 'समुत्पतन्तु प्रदिशो नभस्वतीः' अथर्व. ४.२५ वृष्टिसूक्त नाम से प्रसिद्ध है, जिसमें सोलह मन्त्र हैं । दिशाएँ बादलों से उमड़ पड़े, प्रचुर वर्षा हो मेंढक प्रसन्नता से बोलने लगें, ओषधियाँ लहलहा उठें आदि प्रार्थना इन मन्त्रों में की गयी है । यह आतप से व्याकुल मनुष्यों की भावाभिव्यक्ति है । कौशिक विनियोग करते हैं कि जिसे वर्षा की कामना हो वह मरुतों अथवा मन्त्रोक्त देवताओं के प्रति आज्यहोम करे । काश, दिविधुवक तथा वेतस ओषधियों को एक पात्र में रखकर सम्पातित तथा अभिमन्त्रित कर जल में अधोमुख ले जाए और उन्हें प्रवाहित कर दे । कुत्ते और मेंढे के सिर को इस सूक्त से अभिमन्त्रित कर पानी में फेंक दे । मनुष्य के केश और पुराने जूतों को बाँस के अग्रभाग में बाँध कर खड़ा करे । तुषासहित कच्चे मृत्पात्र पर अभिमन्त्रित जल छिड़क कर तीन पैरों वाले छींके में रखकर पानी में फेंक दे । वर्षा की कामना होने पर वृष्टियज्ञ करना तो वैदिक है, शेष सब मन्त्र-तन्त्र की बातें कपोल-कल्पित हैं ।

९) 'त्वया मन्यो सरथमारुजन्तो' अथर्व. ४.३१ तथा 'यस्ते मन्योविधद् वज्रसायक' अथर्व. ४.३२ देनों मन्युसूक्त हैं, जिनमें प्रतेयक में सात-सात मन्त्र हैं । इनमें मन्यु के मूर्त रूप सेनानी को शत्रुविजय के लिए उद्बोधन दिया गया है । इन पर कौशिक के कुछ विनियोग इस प्रकार हैं-स्वसेना और परसेना के मध्य में खड़ा होकर दोनों सेनाओं की ओर देखता हुआ इनका जप करे । भंग और मूँज के पाशों को अथवा कच्चे पात्रों को इन सूक्तों से सम्पातित और अभिमन्त्रित करके शत्रुसेना के सञ्चारस्थलों में फेंक दे । जय-पराजय-विज्ञान के लिए शरतृणों को दोनों सेनाओं के मध्य में रखकर इन सूक्तों से अभिमन्त्रित कर आङ्गिरस अग्नि से जलाये । जिस सेना में धुआँ पहुँचे उसका पराजय होगा, यह जाने ।

१०) 'ऋधङ् मन्त्रो योनिं' अथर्व. ५.१ तथा 'तदिदास भुवनेषु ज्येष्ठम्' अथर्व. ५.२ दोनों नौ-नौ मन्त्रों के सूक्त हैं, जिनमें जीवात्मा के शरीर-धारण, संसार-क्षेत्र में अवतरण, मर्यादा-पालन आदि का वर्णन है । इन पर कौशिककृत विनियोगों में से कतिपय निम्नलिखित हैं- पुष्टिकर्मों में इन सूक्तों से मिश्रित धान्य और भुने-पिसे सुत्तू को बकरी के रक्त और दधिघृत-मधु-उदक रूप रस में मिला कर अभिमन्त्रित कर खा लें । पुष्टिनिमित्त ही तीन उदुम्बर-चमसों में या प्लक्ष-चमसों में मिश्रित धान्य को डालकर और दधि-मधु आदि रसों को मिलाकर अभिमन्त्रित कर पूर्वाह्ण, मध्याह्न और अपराह्ण काल में एक-एक चमस खाए । पुष्टिकर्मों में ही ऋतुमती स्त्री के रक्त को दधि-मधु आदि रसों में मिश्रित कर सम्पातित एवं अभिमन्त्रित कर प्रदेशिनी और मध्यमा अंगुलियों से खाये ।

११) 'ममाग्ने वर्चो विहवेष्वस्तु' अथर्व. ५.३ सूक्त में १२ मन्त्र हैं । अग्नि नाम से सेनानी को सम्बोधन कर कहा गया है कि तू शत्रुओं को पराजित करके हमारी रक्षा कर, जिससे हमारे मनोरथ पूर्ण हों और हमारा राष्ट्र उत्कर्ष की चरम सीमा को प्राप्त कर सके । बाद के मन्त्रों में सोम, इन्द्र, सविता आदि से रक्षा की प्रार्थना की गयी है । इस सूक त पर कौशिकसूत्र का एक विनियोग यह है- यदि पिता चाहे कि दायभाग के भंटवारे में कोई कलह उपस्थित न हो तो वह विभाग करते समय तेली की रस्सी को अभिमन्त्रित कर हाथ में पकड़ ले ।

१२) 'ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्' अथर्व. ५.६ सूक्त में १४ मन्त्र हैं । प्रथम ब्रह्म का वर्णन कर यह प्रार्थना की गयी है कि तीक्ष्ण शस्त्रास्त्रों वाले सोम और रुद्र शत्रु की हिंसा कर हमें सुखी करें । अग्नि को सम्बोधन कर कहा गया है कि जो आँख से, मन से, विचार से, संकल्प से हमें पापी बनाना चाहें, उन्हें तू अपने शस्त्र से निहत्था कर दे । अन्त में इन्द्र की शरण में जाने का शस्त्र से निहत्था कर दे । अन्त में इन्द्र की शरण में जाने का संकल्प व्यक्त किया गया है । इस पर कौशिक के कुछ विनियोग इस प्रकार हैं-रोगी नीरोग हो जाएगा या नहीं यह जानने के लिए तीन स्नायु-रज्जुओं को इस सूक्त से अभिमन्त्रित कर अंगारों पर रख दें । यदि वे ऊपर चली जाएँ तो समझें कि रोगी जीवित रहेगा । संग्राम में किसका जय या पराजय होगा, यह जानना हो तो तीन स्नायु-रज्जुओं को इस सूक्त से अभिमन्त्रित कर लें । फिर एक रज्जु अपनी सेना है, दूसरी मध्य की रज्जु मृत्यु है, तीसरी रज्जु शत्रु-सेना है, यह मन में सोचकर उन्हें अंगारों पर रख दें । जिसके ऊपर मृत्यु-रज्जु चली जाए, उसका पराजय होगा । जो मृत्यु-रज्जु के ऊपर चढ़ जाएगी, उसकी जीत होगी । जो सामने की ओर चली जाएगी उसकी भी विजय होगी । इसी प्रकार स्त्री के प्रसवदोष में और सूतिकारोग में इस सूक्त से भात को अभिमन्त्रि कर खिलाए तथा मथे हुए सत्तु को अभिमन्त्रित कर पिलाए ।

१३) 'एका च मे दश च मेपवक्तार ओषधे' अथर्व. ५.१५ तथा 'यद्येकवृषोसि सृजारसोसि' अथर्व. ५.१६ दोनों ११-११ मन्त्रों के सूक्त हैं । प्रथम सूक्त में ऋतजाता, ऋतावरी मधुला ओषधि को सम्बोधन कर कहा है कि यदि एक और दस, दो और बीस, तीन और तीस, चार और चालीस, पाँच और पचास, छह और साठ, सात और सत्तर, आठ और अस्सी, नौ और नब्बे, दस और सौ, सौ और हजार व्याधियाँ या दुर्वक्ता मुझे हानि पहुँचाने आयें, तो भी तू मुझे मधु प्रदान कर । द्वितीय सूक्त में रोगादि को ललकार कर कहा गया है कि चाहे तू अकेला आता है, या दो, तीन, चार, पाँच, छह, सात, आठ, नौ, दस, ग्यारह के साथ आता है, तो भू तू हमें छोड़ दे, अब तू निर्बल हो गया है ।इस पर कौशिक विनियोग करते हैं- गौओं के रोगोपशमन, पोषण तथा प्रजनन के कर्मों में लवणयुक्त या अकेले जल को प्रथम सूक्त से अभिमन्त्रित कर गौओं को पिला दें । दुष्ट वक्ता का मुख-स्तम्भन करना हो तो खलतुलपर्णी को मधु में बिलोए हुए सत्तुओं पर जर्जर करके उक्त दोनों सूक्तों से अभिमन्त्रित कर पिला दें । किसी का शाप लगा हो तो उसकी चिकित्सा के लिए द्वितीय सूक्त से गृहद्वार को अभिमन्त्रित कर बन्द करे ।

१४) 'नैतां ते देवा अददुस्तुभ्यं नृपते अत्तवे' अथर्व. ५.१८ और 'अतिमात्रम वर्धन्त नोदिव दिवमस्पृशन्' अथर्व. ५.१९ ये दोनों ब्रह्मगवीसूक्त नाम से प्रसिद्ध हैं । जो राजा ब्राह्मण की गौ को खाता है, वह स्वयं नष्ट हो जाता है तथा उसका राष्ट्रतेजोविहीन हो जाता है, यह इन सूक्तों में प्रतिपादित किया गया है । विद्वान् व्याख्याकारों ने यहाँ गौ का अर्थ वाणी लिया है । ब्रह्मवित् ज्ञानी ब्राह्मण की वाणी या परामर्श की उपेक्षा करने का उक्त दुष्परिणाम राजा को भोगना पड़ता

है, यह तात्पर्य है । यदि गौ का अर्थ यहाँ गाय पशु अभिप्रेत होता तो केवल ब्राह्मण की ही गाय को खाने का निषेध क्यों किया गया, गाय तो किसी भी वर्ण की क्यों न हो, अवध्य तथा अभक्ष्य है । कौशिक ने इन दोनों सूक्तों का विनियोग अभिचार-कर्म में किया है । यदि कोई ब्राह्मण की गौ को हरे, मारे, काटे पकाए, खाए तो ब्रह्मचारी उस विद्वेषी का मन में ध्यान करके इन सूक्तों को जपे, तीन बार कहे कि वह मर जाए, बारह रात्रि व्रतपूर्वक रहे, द्वादशरात्र व्यतीत होने पर दूसरे दिन जब सूर्य उदित होगा तब शत्रु मरा मिलेगा । यहाँ यह अभिचारकर्म कौशिक का स्वाविष्कृ है ।

१५) 'सिहे व्याघ्र उत या पृदाकौ त्विषिरग्नौ ब्राह्मणे सूर्ये या' अथर्व. ६.३८ चार मन्त्रों का सूक्त है । इसमें यह कामना की गयी है कि जो तेजस्विता सिंह, व्याघ्र, सर्प, अग्नि, ब्राह्मण, सूर्य, हाथी, चीता, सुवर्ण, जल, गौ, पुरुष आदि में है, वह तेजस्विता ब्रह्मवर्चस् के साथ हमें भी प्राप्त हो । इससे अगला 'यशो हविर्वर्धतामिन्द्रजूतं' अथर्व. ६.३९ आदि तीन मन्त्रों का सूक्त है, जिसमें यशस्विता की प्रार्थना की गयी है । इन दोनों सूक्तों पर कौशिक का विनियोग है कि जिसे चर्चःप्राप्ति की इच्छा हो वह स्नातक, सिंह, व्याघ्र, बकरा, मेंढा, वृषभ और राजा इन सातों के नाभि-लोमों को लाक्षा से सान कर और ऊपर सुवर्ण चढ़ा कर इन सूक्तों से अभिमन्त्रित कर बाँध ले, तथा पलाश आदि दस शान्त वृक्षों के खण्डों से बनी हुई मणि को भी लाक्षा और हिरण्य से वेष्टित कर सम्पातित और अभिमन्त्रित करके बाँधे । वस्तुतः तो सूक्त में भावना का बल है कि सिंह, व्याघ्र आदि में जो अपने-अपने प्रकार का तेजस्विता का गुण है उसे हम अपने अन्दर धारण करें । नाभि-लोमों को ही बाँधना है तो अन्य प्राणियों के नाभि-लोम प्राप्त हो भी जायें, किन्तु सिंह, व्याघ्र और राजा के कैसे सुलभ हो सकेंगे ? फिर सूक्त में तो साँप, ब्राह्मण, हाथी, चीता, गाय और घोड़े का भी नाम आया है, इन प्राणियों के भी लोम या अन्य कोई शरीरावयव मणि बनाने में क्यों नहीं लिये गये ?

१६) 'अव ज्यामिव धन्वनो मन्युं तनोमि ते हृदः' अथर्व. ६.४२ आदि तीन मन्त्रों का मन्युशमन-सूक्त है । अपने प्रति क्रोध करने वाले मनुष्य को सम्बोधन कर कहते हैं-जैसे धनुष से प्रत्यंचा को उतार देते हैं, वैसे ही मैं तेरे हृदय से क्रोध को उतार देता हूँ, तेरे क्रोध को मैं भारी पत्थर से कुचल देता हूँ, तेरे क्रोध को मैं एड़ी और पंजे से रगड़ देता हूँ, जिससे भविष्य में हम दोनों मित्र के समान रहें । पत्थर से कुचलना, एड़ी-पंजे से रगड़ना ये भाषा के मुहावरे हैं, जो भावना की तीव्रता को व्यक्त करते हैं । किन्तु कौशिक निम्न विनियोग प्रदर्शित करते हैं-स्त्री का पुरुष के प्रति या पुरुष का स्त्री के प्रति क्रोध हो तो कुपित की ओर देखते हुए पत्थर को अभिमन्त्रित कर हाथ में पकड़, 'सखायाविव सचावहा' इस द्वितीय ऋचा को जपते हुए पत्थर को भूमि पर फेंक दे, फिर 'अभि तिष्ठामि ते मन्युं' इस तृतीय ऋचा को जपते हुए उस पत्थर के ऊपर थूके । फिर उस कुपित पुरुष या स्त्री की छाया में सूक्त की तीनों ऋचाओं से धनुष को अभिमन्त्रित कर उस पर डोरी चढ़ाए । यहाँ विचारने योग्य हैं कि जिस कुपित पुरुष या स्त्री के प्रति ये क्रियाएँ करने लगेंगे उसका क्रोध उतरेगा या और अधिक बढ़ जाएगा । फिर मन्त्र में तो धनुष से डोरी उतारने की उपमा दी गई है, पर विनियोग में धनुष पर डोरी चढ़ायी जा रही है ।

१७) 'अयं तो नभसस्पतिः संस्फानो अभिरक्षतु' अथर्व. ६.७९ तीन मन्त्रों का सूक्त है, जिसमें 'नभसस्पति संस्फान' देव से यह कामना प्रकट की गयी है कि वह हमारे घरों में धान्य की अपार समृद्धि ला दे । 'संस्फान' शब्द 'ओस्फायी वृद्धौ' धातु से निष्पन्न होता है, जिसका अर्थ है समृद्धि लाने वाला । 'नभसस्पति' से सायण ने प्रथम मन्त्र में अग्नि, द्वितीय मन्त्र में वायु और तृतीय मन्त्र में सूर्य गृहीत किया है । इसका अर्थ पर्जन्य भी कर सकते हैं । हम वृष्टियज्ञ आदि से इन प्राकृतिक शक्तियों को अनुकूल करें, जिससे प्रचुर वर्षा होकर प्रभूत सस्य-सम्पत्ति उत्पन्न हो, यह अभिप्राय है । इस पर कौशिक का विनियोग इस प्राकर है- जिसे धान्यवृद्धि की इच्छा हो वह एक पत्थर पर जल छिड़क कर इस सूक्त से उसे अभिमन्त्रित कर जिसमें धान्य भरा जाता है उस कोठे के ऊपर उस पत्थर को रख कर एक-एक मन्त्र बोलता हुआ क्रमशः तीन धान्यमुष्टियाँ उसके ऊपर धरे । पाठक स्वयं देखें कि क्या इस विधि से धान्य-समृद्धि हो सकेगी ।

१८) 'अन्तरिक्षेण पतति विश्वा भूताव चाकशत्' अथर्व. ६.८० तीन मन्त्रों का सूक्त है । इसमें 'दिव्य श्वा' के तेज से और हवि से रोग-निवारण (अरिष्टताति) का वर्णन है । यह 'दिव्य श्वा' साधारण कुत्ता नहीं, किन्तु द्युलोकवर्ती सूर्य है । तृतीय मन्त्र में इस दिव्य श्वा का परिचय इस रूप में दिया गया है कि जलों में तेरा जन्म है, द्युलोक में तेरा घर है, समुद्र, बादल और पृथिवी में तेरी महिमा है- अप्सु ते जन्म दिवि ते सधस्थं समुद्रे अन्तर्महिमा ते पृथिव्याम् । अब इस पर कौशिक का विनियोग देखिए-यदि कोई अंग कौए, कबूतर, बाज आदि पक्षी से विक्षत हो जाए तो कुत्ते के पैर के नीचे की मिट्टी लेकर उसे इस सूक्त से अभिमन्त्रित कर विक्षत अंग पर उसका लेप कर दे ।

१९) 'अग्ने जातान् प्रणुदा मे सपत्नान्' अथर्व. ७.३४ तथा 'प्रान्यान्त्स पत्नान्त्सहसा सहस्व' अथर्व. ७.३५ क्रमशः एक एवं तीन मन्त्रों के सूक्त हैं । दो मन्त्रों में अग्नि (अग्रणी राजा या सेनानी) को कहा गया है कि तू उत्पन्न शत्रुओं को नष्ट कर दे तथा जो अनुत्पन्न, अर्थात् अभी गर्भ में हैं, उन्हें भी नष्ट कर दे, जो सेना लेकर हमारे राष्ट्र पर आक्रमण करें उन्हें भी नष्ट कर दे, जो सेना लेकर हमारे राष्ट्र पर आक्रमण करें उन्हें पददलित कर दे, इस प्रकार अपने राष्ट्र को तू समुन्नत एवं परिपूर्ण कर । अन्तिम दो मन्त्रों में शत्रु-नारी को कहा गया है कि तुझे मैं गर्भ-धारण के अयोग्य कर दूँगा । इस पर कौशिक का विनियोग द्रष्टव्य है- शत्रु को निःसन्तान करने के लिए खच्चरी के मूत्र में पत्थर घिस कर इन सूक्तों के मन्त्रों से अभिमन्त्रित कर भात के साथ एक स्त्री को खिलादे तथा वही मूत्र उसके आभूषणों पर लेप करे और उस स्त्री के सिर की माँग (सीमन्त) की ओर देखे । विचारणीय है कि यह खच्चरी (अश्वतरी) के मूत्र का विनियोग कहाँ से आ गया । सायण ने इस विनियोग का मूल वेदानुमोदित सिद्ध करने के लिए ही सम्भवतः 'अस्वं त्वाप्रजसं कृणोमि' अथर्व. ७.३६.३ की व्याख्या में 'अस्वं' के स्थान पर 'अश्वां' पाठ मान लिया है और अश्वतरी (खच्चरी) अर्थ कर लिया है तथा यह आशय लिया है कि जैसे अश्वतर मादा-सदृश अंग रखते हुए भी सन्तानहीन होती है, वैसे ही शत्रु-नारी भी सन्तान उत्पन्न करने में असमर्थ हो जाए, किन्तु मूल पाठ 'अस्वं' ही है, जिसका अर्थ होता है प्रसवयोग्यतारहित- न

क्रमशः पृ.१० पर...

कल्याणमय वचन सुनें

-प्रो. विष्णुदयाल

ऋषिगण यह भली प्रकार जानते थे कि सब देशों और सब कालों में बुरे और अच्छे जन साथ-साथ पाए जाते रहे हैं। यह बात तो साधारण व्यक्ति भी भली-भाँति जानता है कि किसी काल-विशेष एवं किसी देश-विशेष में श्रेष्ठजनों की संख्या अधिक थी। श्रेष्ठ रहकर निकृष्ट पर दया करना ऋषिगण अपना कर्त्तव्य मानते थे। आधुनिक-कालीन ऋषि स्वामी दयानन्द ने भी कहा था, "केवल अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट नहीं होना चाहिए।"

भारत के महापुरुष बड़े होकर छोटों का तिरस्कार नहीं करते थे, जैसे कि पश्चिमी राष्ट्र शक्तिशाली बनकर दुर्बल देशों को अपमानित करते हैं। भारतीय अपने समान ही सबको उच्च बनाने के लिए तत्पर रहा करते थे।

दूरदर्शी ऋषि भविष्य का विचार करके अपने युग के लोगों को कहा करते थे-तुम लोग भी हमारे साथ मिलकर कहते रहना-

"भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम भद्रं पश्येमाक्षिभिः ॥"

अर्थात् 'हम कानों से कल्याणमय वचन सुनें, नेत्रों से कल्याण ही देखें।' कान मनुष्य से भिन्न जीवों को भी प्रदान किए गए हैं; वे भी मधुर स्वर से मुग्ध हुआ करते हैं। बाँसुरी की तान सुनकर मृग भी कुलाँचें भरना भूल जाता है। अन्तर केवल इतना है कि मृग या अन्य पशु-पक्षी गीतों के अर्थ समझने में सर्वथा असमर्थ हैं।

मधुर स्वर तो गणिका अथवा नर्तकी भी सुनाती हैं, जिनके सम्पर्क में आकर बड़े-बड़े मन्त्री तथा उच्चाधिकारी इस कलियुग में अपार आनन्द का अनुभव करते हैं। केवल विवेकी पुरुष समझ पाते हैं कि गणिकाओं के कामोद्दीपक गीतों के श्रवणार्थ हो हमें ये कर्ण प्रदान नहीं किये गए हैं। इसी प्रकार नेत्र भी हमें रूप-लावण्य पर मुग्ध होकर अनर्थ करने के लिए प्रदान नहीं किये गए।

यदि कोई हमें किसी साधु-महात्मा से मिलने को चलने के लिए कहे तो हम उसके लिए तुरन्त हीतैयार नहीं हो जाते, न उनके विषय में कोई अच्छी धारणा ही रखते हैं। हम समझते हैं कि वे तो अर्द्धनग्न रहते हैं, जन-साधारण को ऐसी-ऐसी बातें करने को कहते हैं जो कि अत्यन्त कठिन होती हैं; सर्वाधिक वें लोग भोग से मुख मोड़कर योग की ओर अपना मुख करने के लिए प्रेरित करते हैं। इन बातों का मन में विचार करके किसी ज्ञानी-ध्यानी से अथवा किसी साधु-सन्त से मिलने के प्रस्ताव को हम सहसा स्वीकार नहीं कर पाते।

हमारी इच्छा सुन्दर महल में वास करने, आधुनिक ढंग की मोटर-गाड़ियों में बैठकर छात्रा करने, सुन्दर वस्त्र धारण करके अपनी धाक जमाने की होती है।

किन्तु क्या हम यह निश्चित कह सकते हैं कि यदि हमारी इच्छाएं पूर्ण हो जाएँगी तो हम सुखी हो जाएँगे ?-कदाचित् नहीं; क्योंकि इच्छाएँ कभी पूर्ण नहीं होतीं। वे निरन्तर बढ़ती रहती हैं। तदपि, जिन्होंने ज्ञानी एवं सन्त पुरुषों के सदुपदेश को सुना, उन्हें सुख ही सुख मिला।

कुछ वर्ष पूर्व सलेही नामक एक ऐसे व्यक्ति का पता चला है जिसकी आयु १६५ वर्ष बताई जाती है। इस आयु में भी वह व्यक्ति १०-१२ मील पैदल चलकर बाज़ार के साधारण कार्य करता है। उसका कहना है कि उसने कभी मदिरा का स्पर्श तक नहीं किया। ऐसे व्यक्ति का पता लगने पर उसके असंख्य दर्शनार्थियों को ईरान के पहाड़ों पर चढ़ना पड़ा, अनेक नदी-नालों और झीलों को पार करना पड़ा।

इस प्रकार का जीवन जन-साधारण की दृष्टि में असम्भव होता है। ऐसे व्यक्तियों को जंगली और असभ्य समझा जाता है। किन्तु उस व्यक्ति कोदेखकर अब लोग समझने लगे हैं कि उन असभ्य समझे जानेवाले व्यक्तियों में कितनी शारीरिक और मानसिक शक्ति होती है।

ईरान के वे वृद्ध सज्जन अपनी विद्यमानता से संसार को सजग कर रहे हैं कि जिस व्यक्ति ने मांरा-मदिरा का स्पर्श न किया हो, सात्त्विक जीवन-यापन किया हो, उसे वैदिक परम्परा की उपज ही मानना चाहिये।

वैदिक काल में आर्यजन सूर्य, चन्द्रमा, विशाल मैदानों, नदियों, तालाबों, पहाड़ों एवं वनों से प्रीति का नाता जोड़ते थे। वे प्रकृति के पुत्र थे, अतः जीवन के आनन्द का अनुभव करने में असमर्थ नहीं थे।

सभ्यता तो हमें दूर ले-जाकर फैंकती है। उस सभ्यता के परिवेश में हमारा जीवन कृत्रिम हो जाता है। यदि हमें मोटरगाड़ी में बैठनेकी आदत पड़ जाय, तो फिर हम दो डग भी पैदल चलने के लिए तैयार नहीं होते।

यदि अपने जीवन में व्याप्त कृत्रिमता को हमें दूर करना है तो हमें पुराने उपदेश में यौवन, ताज़गी पाकर उसके अनुकूल अपना आचरण करना चाहिये।

ऋषि का नाम लेकर भी कई भाई इस युग की सभ्यता का शिकार बन रहे हैं। उन्हें अन्य लोगों को वेद की ओर झुकाना चाहिये था, किन्तु आज वे स्वयं ही आधुनिकता के प्रवाह में बहे जा रहे हैं! यदि उन्हें किसी प्रकार की विद्या अथवा ज्ञान-प्रचार के लिए धन की आवश्यकता होती है तो वे मीना बाज़ार लगार धन-अर्जन करने को उद्यत हो जाते हैं। इस प्रकार के बाज़ार विदेशी शासक लगाते थे, किन्तु इसमें उनका उद्देश्य हमारे समाज को गिराना होता था और अपने उस उद्देश्य में उन्हें सफलता भी मिलती थी। किन्तु वर्तमान में हम स्वयं अपने लिए ही उस प्रकार के आयोजन करके गर्त में गिरने को उद्यत हो रहे हैं। अपने प्रति स्वयं ही षड्यन्त्र रच रहे हैं।

हमें कोई 'लकीर का फ़कीर' न समझ बैठे, इस दोष से मुक्त होने के लिए हम पाश्चात्य देशों के रीति-रिवाज, रहन-सहन आदि का अन्धानुकरण करने लगते हैं। पहले हम कहा करते थे कि वेद ज्ञान-विज्ञान से परिपूर्ण हैं, मगर आज हम भी यही कहने लगे हैं कि वैज्ञानिक युग तो अब आया है; इस वैज्ञानिक युग के अनुकूल हमें स्वयंको ढालना है।

जिन ऋषियों के पास अपार ज्ञान था, वे विज्ञानवेत्ता भी थे। स्वर्गीय डॉ. राघवन ने, जो किसी समय मद्रास विश्वविद्यालय में प्राध्यापक थे, अपने देहन्त सेकुछ वर्ष पूर्व जिन्होंने मौरिशस की भी यात्रा की थी, हमारे प्राचीन ग्रन्थों का उल्लेख करके यह सिद्ध किया है कि रामायण के युग में यन्त्र-ध्वजा, 'उपलयन्त्र' जिससे बाण फेंकते थे, महाभारत-काल में मत्स्य-यन्त्र, 'अश्म-यन्त्र' जिससे पत्थर प्रक्षिप्त किये जाते थे, अर्थशास्त्र के युग में यन्त्र-युक्त सोपान, भोज-काल में उड़न-रथ, सिकन्दर के आक्रमण के समय वायव्यास्त्र, जैन-आगमों के काल में अश्वहिहीन रथ, आदि का निर्माण होता था। इतना ही नहीं, अपितु चीनियों के एक प्राचीन ग्रन्थ में यह उल्लेख मिलता है कि भारतीय उड़ती सीढ़ियों

से काम लेते थे । ९वीं अथवा १०वीं शती के बुद्ध स्वामी ने आकाश-यन्त्र का उल्लेख किया था । रानी विजया एक बार मयूर-यन्त्र का उल्लेख किया था । रानी विजया एक बार मयूर-यन्त्र में बैठी थी, जो कि उड़ता था । क्षेमेन्द्र ने ऐसे विमान का वर्णन किया है जिसमें हज़ार यात्रियों के लिए जगह थी । प्रसिद्ध लेखक फिलॉस्ट्रेहुस ने कई बार अपने ग्रन्थ में ब्राह्मणों का नाम लिया था और बताया था कि वे यन्त्र बनाना जानते थे ।कुछ यूरोपियों ने यहाँ तक लिखा है कि बारूद का निर्माण पहले चीन में नहीं, अपितु भारत में हुआ था । यदि भारत में यन्त्रों का प्रचलन न होता तो गीता में यह उल्लेख किस प्रकार आता-

''ईश्वर सर्वभूतानां हृद्देशेर्जुन तिष्ठति । भ्रामयन् सर्व भूतानि यन्त्रारूढानि मायया ।।''

सब युग समान नहीं रहते । उत्थान के उपरान्त पतन आता है । १८५९ वर्ष में समस्त संसार को स्मरण कराया गया था कि इस वर्ष नवम्बर मास में डार्विन के युगान्तरकारी विकासवाद के सिद्धान्तवाले ग्रन्थ को प्रकाशित हुए १०० वर्ष पूर्ण होनेवाले हैं ।

सामान्यतया यह माना जाता है कि मनुष्यका जैसा रूप हम आज देखते हैं, प्रारम्भ में यह इस प्रकार का नहीं था । क्रमिक विकास के उपरान्त ही मनुष्य ने यह रूप प्राप्त किया है । इसी से यह सिद्धान्त भी प्रतिपादित होने लगा कि मनुष्य प्रारम्भिक अवस्था में सभ्य था, कालान्तर में शनैःशनैः उसका पतन हुआ है ।

अनेक तथाकथित भारतीय विद्वान् भी इस विकासवाद के सिद्धान्त के अन्ध-समर्थक बन गए । वे यह मानने के लिए उद्यत नहीं कि प्राचीन भारत की जो सभ्यता थी, वह उच्चकोटि की थी । खोज होती रही और पिछले दिनों पता चला कि 'बेसल में प्राकृतिक इतिहास के संग्रहालय के क्यूरेटर प्रोफ़ेसर जोहोसहरजल ने मानव का । करोड़ २० लाख वर्ष पुराना ढाँचा खोज निकाला है । अभी तक मानव के इतने पुरातन होने का प्रमाण नहीं मिला था । यह ढाँचा २ अगस्त को ग्रो सेटो के समीप बेसिनाली में कोयला खान की गैलरी में भूमि से ६०० फुट नीचे मिला ।'

प्रोफ़ेसर महोदय का कहना था कि मानव-शरीर-विज्ञान के क्षेत्र में यह खोज बहुत महत्त्वपूर्ण है और इससे मेरा यह कथन सिद्ध हो जाता है कि मानव प्रारम्भ में भी मानव ही था, कभी भी बन्दर नहीं था । मानव का प्रारम्भ, जैसी कि पाश्चात्यों की मान्यता है, १० लाख वर्ष पूर्व ही नहीं, अपितु इससे कहीं अधिक पहले हुआ था ।

डार्विन यह सिद्धान्त प्रतिपादित करता है कि बलवान् बलहीन को पछाड़ता है । इस प्रकार वह करोड़ों वर्षों से एक-दूसरे को नष्ट करता आ रहा है । इस सिद्धान्तानुसार तो अब तक किसी भी बलहीन का अस्तित्व रहना ही नहीं चाहिए था; किन्तु देखने में यही आ रहा है कि आज भी इस संसार में दुर्बल से दुर्बलतर जीव भी विद्यमान हैं ।

डार्विन से उधार में लिया विकासवाद का यह सिद्धान्त नास्तिकों ने अपनी नास्तिकता का प्रचार करने के लिए शस्त्र के रूप में प्रयुक्त किया । कहा जाता है कि डार्विन नास्तिक नहीं था, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार कि फ्रेंच लेखक वोल्तेर नास्तिक नहीं थे । किन्तु, डार्विन के शिष्य तो गुरु से भी आगे बढ़ गए ।

भारत आदि देशों में कभी अंग्रेजों का राज्य था । उन विदेशी शासकों को डार्विन के सिद्धान्त से बल मिला, क्योंकि जब विकासवाद का प्रसार होगा, तभी तो अत्याचारी कह सकेंगे कि हम बलहीन जनों की रक्षा कर रहे हैं ।

डार्विन और उसके अनुयायियों ने कहा कि यदि किसी प्राणी का कोई अंग घिसने लग जाय तो कुछ समयोपरान्त वह अंग उसके शरीर में नहीं रह पाएगा ।

इसके आधार पर अनेक अनुसन्धान कर्ताओं ने पीढ़ियों तक चूहों की पूँछ काटकर अनुसन्धान करने का यत्न किया, किन्तु असफलता ही हाथ लगी । असंख्य पीढ़ियों की पूँछ काटने के बाद भी चूहों को डार्विन का सिद्धान्त पुच्छविहीन नहीं बना सका । प्रमाण के न मिलने पर भी, विकासवादी इस सिद्धान्त पर अभी भी अड़े हुए हैं । लोग अन्धविश्वासी बनकर विकासवाद की प्रशंसा करते हैं । वे धर्म से विमुख होते जाते हैं और संकल्प करना व्यर्थ मानते हैं ।

पाश्चात्यों का अन्धानुकरणकरनेवाले भारतीय यह वैदिक प्रार्थना नहीं करते-

''वेद-वाणी हमें पवित्र करे ।'' (ऋ १-३-१०)

जब ऋषियों ने कहा था कि शरीर के अंग-अंग से उत्तम कार्य किया जाय, तब उन्होंने यही कहना चाहा था कि मुख मिला है तो उससे उत्तम वाणी निकले; ऐसा न हो तो मनुष्य मुखवाला रहने पर भी गूँगा ही रहेगा । कर्णवाला होने पर भी वहवेद-वाणी-सदृश उत्तम वाणी न सुने तो उससे तो वह बहरा ही उत्तम है जो कम-से-कम बुरा भी नहीं सुनता । पाँव के होते हुए जो जाकर श्रेष्ठ कार्य में सम्मिलित नहीं होता, उससे तो यही अच्छा है कि वह पंगु हीहो । नेत्रवान् होने पर भी जो दर्शनीय दृश्य न देखकर विलासिनी नर्तकियों को नाचते-गाते और नखरे करते देखना चाहता है, उससे तो अन्धा ही भला ! ज्ञान और कर्मेन्द्रियाँ हमें इस कारण नहीं प्राप्त हुई कि हम उनका दुरुपयोग करें ।

...पृ. ८ का शेष...

सूते इति असूः, ताम् अस्वम् । 'अश्वां' पाठ मानें तो अश्वा का अर्थ घोड़ी होता है, खच्चरी नहीं और घोड़ी सुप्रसवा होने का प्रतीक है, न कि अप्रसवा होने का ।

२०) 'नमो रूराय च्यवनाय नोदनाय धृष्णवे' अथर्व. ७.११६ दो मन्त्रों का सूक्त है, जिसमें उष्णज्वर, शीतज्वर, दो दिन छोड़ कर आने वाला ज्वर आदि ज्वरों को दूर से ही नमस्कार करते हुए यह भावना व्यक्त की गयी है कि हम इन्हें निश्चय ही नष्ट कर देंगे । इस पर कौशिककृत विनियोग यह है- सब ज्वरों को दूर करने के लिए ज्वरग्रस्त की शय्या के नीचे सिरकियों से कसे हुए एक मेंढक को नीले-लालदो सूत्रों से बाँध कर रख दे और ज्वरग्रस्त के ऊपर इस सूक्त की दोनों ऋचाओं के द्वारा अभिमन्त्रित जल के छीटे दे । कह सकते हैं कि मेंढक में ज्वर के चले जाने का संकेत मन्त्र में भी आया है- यो अन्येद्युरु भयद्युरभ्येतीमं मण्डूकमभ्येत्वव्रतः (मन्त्र २) । पर यहाँ मण्डूक शब्द प्रयुक्त हुआ है, जिसका अभिप्राय मण्डूकपर्णी आदि किसी ओषधि से है । यदि मेंढक में ज्वर को हरने की क्षमता होती तो वर्षा ऋतु में, जबकि आस-पास मेंढक ही मेंढक रहते हैं, यह रोग न फैलता । कौशिक ने मन्त्र में मण्डूक शब्द देखकर उपर्युक्त टोटके का अविष्कार कर लिया है ।

इस प्रकार के टोटके कौशिकसूत्र में भरे पड़े हैं, जिनका मन्त्रार्थ के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है । अनेक विनियोग मारण, उच्चाटन, वशीकरण, कृत्यानिर्हरण, अभिचार, मणि-बन्धन आदि परक भी हैं । ऐसा प्रतीत होता है कि कौशिक एक तान्त्रिक था, जिसने अथर्ववेद का उपयोग अपनी तन्त्रविद्या के प्रचार के लिए किया । परवर्ती सायण आदि विद्वान् बिना देखे-भाले उसी का अन्ध अनुकरण करते रहे ।

वस्तुतः पूर्वकृत विनियोगों का वेद के साथ कोई नित्य सम्बन्ध नहीं है । कौशिक ने भी एक-एक सूक्त पर कई-कई विनियोग लिखे हैं तथा इतर आचार्यों ने उनसे भिन्न स्वतन्त्र ही विनियोग दिखाये हैं । अतः स्वामी दयानन्द की परख-कसौटी के अनुसार वे ही विनियोग मान्य हैं जो युक्तिसिद्ध एवं वेदादिप्रमाणानुकूल हों तथा मन्त्रार्थ से सम्पुष्ट होते हों ।

సంక్షిప్త సత్యార్థ ప్రకాశము ప్రథమ సముల్లాసము

పం.॥ ధూళిపేట రాజరత్నాచార్యులు

మంగళాచరణము

సమస్త శుభకార్యముల కారంభమున 'ఓమ్' అనునామము స్మరించుకొనవలెను. ఓమ్ అనునది పరమాత్ముని నామము. గ్రంథారంభ మునను 'ఓమ్' వ్రాయఁదగును. 'అథ' శబ్దము కూడ గ్రంథారంభమందు ఋషిమునులు వ్రాయుచుండిరి. కాని ఆధునిక గ్రంథము లందు శ్రీగణేశాయనమః, సీతారామాభ్యాం నమః, రాధాకృష్ణాభ్యాంనమః, శ్రీ గురుచరణా భ్యాంనమః ఇత్యాది వచనములు మంగళా చరణముగా జూడబడుచున్నవి. వేదశాస్త్ర విరుద్ధములగుట వలన బుద్ధిమం తులు వీని మిథ్యయనియేభావింతురు. కాన 'ఓమ్ లేక 'అథ' అను శబ్దములనే గ్రంథారం భమున వ్రాయఁదగును.

పరమాత్ముని నిజనామము

'ఓమ్' అనునది పరమేశ్వరుని సర్వోత్తమ నామము. ఏలన ఈ యొకేనామ మందు పరమేశ్వరుని అనేక నామములు ఇమిడి యున్నవి. కఠోపనిషత్తునందు ఏప్రాప ణీయ ప్రభువును వేదములన్ని కొనియాడు చున్నవో, ఎవనిబొందుటకు తపస్సంపన్నులు బ్రహ్మచర్య నియమములను పాలించు చుందురో, అతనీ నామము 'ఓమ్' అని. వ్రాయఁబడియున్నది. ఇటులే వాదాల శాస్త్రము లందు పరమేశ్వరుని ప్రధాన నిజనామము 'ఓమ్' అనియే చెప్పబడు చున్నది.

పరమేశ్వరుని నామముల సంఖ్య

సత్యార్థ ప్రకాశమందలి ప్రథమ సము ల్లాసమందు పరమాత్ముని వందనామములు వ్రాయఁబడినవి. కాని ఆ నామములే గాక పరమాత్మునికి అసంఖ్యానామములు గలవు ఏలన పరమేశ్వరుడు అనంతగుణ, కర్మస్వభావ సంపన్నుడు. కాన నతనినామములు గూడ అనంతములు గలవు. ప్రతి నామము పరమేశ్వరుని యొకానొక గుణమునో, కర్మనో, స్వభావమునో బోధించును. కాన నా పరమేశ్వ రుని వంద నామములు సముద్ర మందొక బిందువంటి వననగును. ఎందుకన వేదాది శాస్త్రములందు పరమేశ్వరుని అసంఖ్య నామములు వ్యాఖానింపఁబడి యున్నవి.

అగ్ని మున్నగు నామార్థముల పరిచయము

'ఓమ్' మరి 'అగ్ని' మున్నగు నామముల నుండి ముఖ్యార్థమందు పరమేశ్వరుఁడే గ్రహింపఁబడును. కాని 'ఓమ్' అనునది కేవలము పరమాత్ముని నామము. ఇఁక అగ్ని మున్నగు నామముల నుండి పరమేశ్వరుడు గ్రహింపఁబడుటకు ప్రకర ణము, విశేషణమును నియామకములై యుండును. ప్రకరణము - ఒకడు తన భృత్యుని సైంధవమును తెమ్మన్నప్పుడు అతడు ప్రకరణ మనగా సమయమును తిలకించ వలెను. సైంధవమునకు రెండర్థములు గలవు. ఒకటి గుఱ్ఱము, రెండవది లవణము. యజమానుని గామన సమయమయ్యె నేని గుఱ్ఱమును, భోజన సమయమేని లవణమును తెచ్చుట యుచితము. అట్లిగాక గమన సమయమందు లవణమును, భోజన సమయ మందు గుఱ్ఱమును దెచ్చెనేని అతని యజమాని కృద్ధుడై నీవు మూర్ఖుడవు - గమన సమయ మందు లవణమును, భోజన సమయమందు గుఱ్ఱమును దెచ్చుట వలన ప్రయోజనమేమి కలదు ? నీవు ప్రకరణజ్ఞుడవు కావు. ఏ సమయమందేది తేవలెనో దానినే తెచ్చి యుందువనును. ఏ యర్థము నెక్కడ గ్రహించ వలెనో ఆ యర్థము నక్కడ నట్లే గ్రహించదగునని దీనినుండి సిద్ధమైనది. దీనినే ప్రకరణమందురు.

ఇవ్విధముగనే స్తుతి ప్రార్థనోపాసనము లెక్కడ వ్రాయఁబడి యుండునో అట్లే సర్వజ్ఞ- శుద్ధ వ్యాపక - సనాతన-సృష్టికర్తాది విశేషణము లెక్కడ వ్రాయబడి యుండునో అక్కడ అగ్ని మున్నగు నామముల నుండి పరమేశ్వరుడు గ్రహింపఁబడును. ఇఁకనెట ఉ త్పత్తి-స్థితి-ప్రళయాది సంబంధ ముండునో అట్లే అల్పజ్ఞ-జడ దృశ్యాది విశేషణములు వ్రాయబడి యుండునో అట అగ్ని మున్నగు నామముల నుండి పరమేశ్వరుడు గ్రహింప బడడు. ఏలన నతడు ఉత్పత్తి మొదలగు వ్యవహారములకతీతుడు.

ఇటులే సర్వజ్ఞాది విశేషణము లున్నచోట పరమేశ్వరుడని, ఇచ్ఛాద్వేష ప్రయత్న సుఖదుఃఖ అల్పజ్ఞాది విశేషణ ములున్న చోట జీవుడని అర్థము చేసుకొన వలెను.

పరమాత్ముని నామములు సార్థకములు

లోకమందు దరిద్రాదులకు ధనపతి మున్నగు నామములు నిరర్థకములై యుండు నట్లు పరమాత్ముని యేనామమైనను నిర్థకము కాదు. పరమాత్ముని నామములు కొన్నిచోట్ల నతని గుణములను, కొన్నిచోట్ల నతని కర్మలను, కొన్ని చోట్ల నతని స్వభావ ములను బోధించు నని దీనినుండి సిద్ధమైనది. కాన 'ఓమ్' మున్నగు నామము లన్ని సార్థకములు. స్వప్రకాశకుడగుట వలన 'అగ్ని'. విజ్ఞాన స్వరూపుడగుటవలన 'మను' అందరిని పాలించువాడును పరమైశ్వర్య వంతుడు నగుట వలన 'ఇందు', జీవనాధారుడ గుట వలన 'ప్రాణ' నిరంతరము వ్యాపకుడగుట వలన పరమేశ్వరుడు 'బ్రహ్మ' అని బేర్కొనఁ బడును.

పరమాత్ముడు నిర్గుణుడు, సగుణుడు

రూపరస గంధస్పర్శాది జడగుణముల నుండియు, అవిద్యా, అల్పజ్ఞతా, రాగ - ద్వేష- క్లేశాది జీవుని గుణముల నుండియు పరమేశ్వరుడు వేరు. ఈ జడజీవ గుణముల నుండి రహితుడైనందున పరమేశ్వరుడు నిర్గుణుడని జెప్పబడుచున్నాడు. ఇఁకనట్లే సర్వజ్ఞత్వము, పవిత్రత, అనంతబలము, ఆనందము మున్నగు గుణములచే గూడి యున్నందున నతడు సగుణుడనియు బేర్కొనఁబడును.

ఈశ్వరస్తుతి ప్రార్థనోపాసనములు

శ్రేష్ఠుని స్తుతించుట, ప్రార్థించుట, ఉపాసించుట అనునవి చూడబడుచున్నవి. గుణకర్మ స్వభావాది సత్య వ్యవహారము లందందరికంటె నధికుడగు నతనినే శ్రేష్ఠుడని యందురు. అట్టి శ్రేష్ఠులందందరికంటె సత్యంత శ్రేష్ఠుడగునతనిని పరమేశ్వరుడని యందురు. అతనితో సమానుడు మరొక డెవడును కాలేదు, లేడు, కాబోడు. అతనితో సమానుడెవడు కానపుడు అతనికంటే నధికుడెట్లు కాగలడు ? సత్యము, న్యాయము, దయ, సర్వసామర్థ్యము, సర్వజ్ఞత్వము మున్నగు గుణములు పరమేశ్వరుడు కలిగియున్నట్లు మరే జడ పదార్థములు లేవు. జీవులునులేరు. సత్యమైన పదార్థము యొక్క గుణకర్మ స్వభావములును సత్యములై యుండును. కాన మనుష్యులు పరమేశ్వరుని స్తుతి ప్రార్థనోపాసనముల జేయుటయే సముచితము. అతని కంటె భిన్నునిదికాదు. ఏలనన బ్రహ్మ, విష్ణు, మహాదేవ నామములు గల పూర్వజ్ఞులు, మహాశయులు, విద్వాంసులు, దైత్యులు, దానవులు, నికృష్ట మనుష్యులు, అన్యసాధారణ పురుషులు గూడ పరమేశ్వరుని యందే విశ్వాసముంచి అతనినే. స్తుతించుచు, ప్రార్థించుచు, ఉపాసించుచు నుండిరి. మరొకని గాదు. కాబట్టి మనమం దరము కూడనటులే వర్తించుట యోగ్యము.

మూడుసార్లు శాంతి పాఠము

శాంతిః, శాంతిః, శాంతిః అని మూడు సార్లు శాంతి పాఠము చేయబడు ప్రయోజనము: ప్రపంచమున త్రివిధ తాపములను దుఃఖములు గలవు. వాని శాంతి అనగా నివృత్తిభావముచే మూడుసార్లు శాంతి పాఠము చేయదగుననుట. ఆ త్రివిధ దుఃఖము లి - మొదటిది ఆధ్యాత్మిక దుఃఖము - ఇది ఆత్మయందును, శరీర మందును అవిద్యా రాగము, ద్వేషము, మూర్ఖత్వము, జ్వరము మున్నగు వాని వలన కలుగును. రెండవది ఆధి భౌతిక దుఃఖము- ఇది శత్రు, వ్యాఘ్ర, సర్పాదుల వలన కలుగును. మూడవది ఆది దైవిక దుఃఖము- ఇది అతివృష్టి, అతిశీతము, అత్యుష్ణత వలనను, మనస్సు యొక్కయు, ఇంద్రియముల యొక్కయు అశాంతి వనను కలుగును.

గాయత్రీ మంత్ర మాహాత్మ్యము

-చలవాది సోమయ్య

ఋషి :
విశ్వామిత్రుడు, దేవత : సవిత; ఛందస్సు: నిచృద్ గాయత్రి; స్వరము : షడ్జము.

మంత్రము :
ఓం భూర్భువః స్వః తత్సవితుర్వ రేణ్యం భర్గో దేవస్య ధీమహి। ధియోయోనః ప్రచో దయాత్ ॥
-యజు. 36-3,
-ఋ. 3-62-10
-సామ : ఉ.అ.13.అ-4 ఖం-1462మం.

పదవి భాగం :- ఓం, భూః, భువః, స్వః, తత్, సవితుః, వరేణ్యం, భర్గః, దేవస్య, ధీమహి, ధియః, యః, నః, ప్రచోదయాత్ ॥

బాలబాలికలకు చిన్ననాటనే తల్లి దండ్రులు గాయత్రీ మంత్రాన్ని అర్థ సహితంగ ఉపదేశించాలని, పరమేశ్వరుణ్ణి ఉపాసించ డానికి అదే ఉత్తమ వేదమంత్రమని మహర్షి దయానందు డంటాడు.

పూర్వపు మహర్షులు, శ్రీగురు విరజానంద, దయానందాది మహాపురుషులు ఈ గాయత్రీ మంత్రోపాసన చేసే సఫల మనోరథులైనారు.

ఈ మంత్రాన్ని బాలబాలికలు, స్త్రీ పురుషులు, బ్రాహ్మణ శూద్రాది వర్ణస్థులు, సమస్త దేశవాసులు - వారు వీర నడమెందుకు - మానవ మాత్రులందరూ పఠించి స్మరించి, మననంజేసి తరింపవచ్చును. మడి మాల అనే భేధాన్నెంచక సర్వదా, సర్వధా సర్వస్థలాలల్లో ఈ మంత్రాన్ని హృదయంలో ధ్యానింప వచ్చును. అజ్ఞానాన్ని వదలించి జ్ఞాన విజ్ఞానాలను పెంచడంలో గాయత్రీ మంత్రం పరమ గురువు ! రక్షించడంలో ఇది రామబాణం ! సమస్త పాపాలనుండి తరింపజేసి మానవులకు ముక్తిని ప్రసాదించ దంలో ఇది అత్యుత్తమ మంత్ర రాజం. నాలుగు వేదాల్లోని సారభూతమైన మంత్రం గాయత్రీ అని కూడ పెద్దలు చెబుతారు.

ఈ గాయత్రీ మంత్రార్థాన్ని మొదట గ్రహించి ప్రచారం చేసినవాడు విశ్వామిత్ర మహర్షి అంటారు. ఈ మంత్రానికి దేవత అనగా విషయము (Subject matter) సవిత - పరమేశ్వరుడు. ఈ మంత్రం 23 అక్షరములు గల నిచృద్ గాయత్రీ ఛందస్సులో ఉంది. షడ్జమ స్వరం.

గాయత్రీ మంత్ర శబ్దార్థము : స్తుతి అర్థానిచ్చే 'గై-గాయ్, శబ్దే' అనే ధాతువుతో 'అవన్' ప్రత్యయము చేర్చడంవలన 'గాయత్రీ' శబ్దము, నిగూఢ భాషణమను అర్థాన్నిచ్చే 'మత్రి - గుప్తభాషణే' అనే ధాతువుతో మంత్ర శబ్దమును సిద్ధమవుతుంది. అంటే గాయత్రీ మంత్రం భగవంతుని స్తుతించడానికి యోగ్య మైనది, నిగూఢ భావాలతో కూడినది అవుతున్నది.

'గాయంతం త్రాయతే ఇతి - గాయత్రీ' - దీనిని జపించువానినిది కాపాడుతుంది కనుక గాయత్రీ అయ్యెనని శతపథ బ్రాహ్మణాది గ్రంథాలు, బృహదారణ్యాకాది ఉపనిషత్తులు గాయత్రీ మంత్ర మహిమను వేనోళ్ళ చాటుతున్నాయి.

సావిత్రీ మంత్రము, గురు మంత్రము :ఈ మంత్రానికి గాయత్రీ మంత్రమని, సావిత్రీ మంత్రమని, గురు మంత్రమని కూడ పేర్లున్నాయి. దీనిని స్మరించే వానినిది రక్షిస్తుంది. కనుక గాయత్రీ మంత్రమని, సవితా - సృష్టికర్తయైన పరమేశ్వరుని ఉపా సించడానికి ఉత్తమమైన మంత్ర రాజము గనుక సావిత్రీ మంత్రమని, అందరికంటె గొప్పవాడైన భగవంతుడు సమస్త మానవులకు ప్రథమ గురువుగా ఉండి వారు తరించడానికి వేదముల ద్వారా ఉపదేశించిన మంత్రం గనుక గురు మంత్రమని మరియు మంత్రం చిన్నదైనా మననం చేసేకొలది నిగూఢమైన గొప్ప అర్థాన్నిచ్చేది గనుకనూ ఇది గురు మంత్ర మనబడింది. ఇంతేకాక గురుకులంలో ఉపన యన సంస్కారానంతరం, వేదారంభ సంస్కారంలో ఆచార్యుడు (గురువు) విద్యార్థి (శిష్యుడు)కి మొదట ఉపదేశించే మంత్రము గనుక గాయత్రి గురుమంత్ర మనబడుతుంది.

గాయత్రీ మంత్రానికి మూడు వేదాల భాష్యం :

ఈ మంత్రం మూడు వేదాల్లో - యజుర్వేద, ఋగ్వేద, సామవేదాల్లోనూ ఉంది. అయితే యజుర్వేదంలో 'భూర్భువః స్వః' అనే పదాలు అధికంగా మంత్రానికి మొదట్లో ఉన్నాయి. మిగిలిన రెండువేదాల్లో అలా లేదు. మూల మంత్రం మాత్రం మూడు వేదాల్లోనూ సమానంగానే ఉంది. ఈ గాయత్రీ మంత్రానికి మూడూ వేదాల్లో మూడు విధాలుగా యివ్వ బడిన భాష్యకారుల అర్థాన్ని క్రింద యిస్తు న్నాను అర్థభేదాన్ని పాఠకులు గ్రహించగలరు.

"ఓ మానవులార ! (భూః) కర్మకాండ యొక్క విద్య, (భువః) ఉపాసనా కాండ యొక్క విద్య మరియు (స్వః) జ్ఞాన కాండ యొక్క విద్యలను పఠించుటకు సంగ్రహ పూర్వకంగా (యః) ఎవడు (నః) మన (ధియః) ధారణ చేయగల బుద్ధులను (ప్రచోదయాత్) ప్రేరే పించుచున్నాడో ఆ (దేవస్య) కామించుటకు యోగ్యుడు (సవితుః) సమస్త ఐశ్వర్య మును ఇచ్చు పరమేశ్వరుడు (తత్) ఇంద్రియ ములచే గ్రహింపబడుటకు వీలుకానివాడు, పరోక్షంగా ఉన్నవాడు (భర్గః) సమస్త దుఃఖ నాశకుడు, తేజ స్వరూపుడు అయిన పరమేశ్వరుని (ధీమహి) ధ్యానించుడు".

-మహర్షి దయానంద యజుర్వేద భాష్యము.

"ఓ మానవులారా ! (యః) ఎవడు (నః) మన (ధియః) బుద్ధులను (ప్రచోదయాత్) ఉత్తమ గుణ కర్మ స్వభావములలో ప్రేరేపించు చున్నాడో (సవితుః) అతడు సమస్త విశ్వమును ఉత్పన్నం చేసినవాడు, సమస్త ఐశ్వర్యములతో కూడిన స్వామి (దేవస్య) సమస్త ఐశ్వర్య ప్రదాత, ప్రకాశమానుడు, అన్నిటిని ప్రకాశింప జేయువాడు, సర్వత్ర వ్యాపించిన అంతర్యామి (తత్) అతడు (వరేణ్యం) అన్నిటికంటె ఉత్తముడు, పొందుటకు యోగ్యుడు (భర్గః) పాపరూప దుః ఖ మూలమును నశింపజేయు ప్రభావశాలి అయిన ఆ పరమేశ్వరుని (ధీమహి) మన హృదయంలో భరించెదము గాక !"

-మహర్షి దయానంద ఋగ్వేద భాష్యము

(తత్) ఆ (సవితుః) సృష్టికర్త పరమేశ్వరుని (వరేణ్యం) శ్రేష్ఠుని (భర్గః) తేజ స్వరూపుని (దేవన్య) దేవుని (ధీమహి) మనము హృదయమున ధరించుచున్నాము (నః) మన (ధియః) బుద్ధులను (యః) అతడు (ప్రచోద యాత్) సదా సత్కర్మలలో ప్రేరేపించుచున్నాడు.

-ఆచార్య వైద్యనాథ శాస్త్రి సామవేద భాష్యం.

మూడు మహా వ్యాహృతులు :

యజుర్వేదంలో గాయత్రీ మంత్రానికి మొదట చేర్చబడిన పదాలు భూః, భువః, స్వః, ఈ మూడింటిని మహా వ్యాహృతులు అంటారు. వ్యాహృతి అంటే వచనము, పలుకు, గూఢార్థాన్ని తెలిపే పదం (a mystic word), ఉపదేశింపబడిన సత్యమని అర్థాలున్నాయి. మహా వ్యాహృతి అంటే పరమేశ్వరుని సత్య స్వరూపాన్ని బాగుగా వర్ణించిన పదాలని యిక్కడ అర్థం ఈ మహా వ్యాహృతులకు అర్థం ముందు యివ్వబడుతుంది.

గణేశ గాయత్రీ మొ॥వి అవైదికములు :

గణేశ గాయత్రి, శివ గాయత్రి, విష్ణు గాయత్రి, దేవీ గాయత్రి, నృసింహ గాయత్రి, కృష్ణ గ్యాత్రి, వేంకటేశ్వర గాయత్రి అని ఇలా 24 గురుదేవీ దేవతల పేర్లతో వెలువడిన కల్పిత శ్లోకాలు వేదమంత్రాలు కావు. వేదోక్తమైన ఏకేశ్వరోపాసనను కాదని అవి అవైదికమైన బహుదేవతారాధనను సమర్థిస్తున్నాయని పాఠకులు గుర్తించగలరు.

గాయత్రీ మహిమను గూర్చి అథర్వ వేదం చెప్పిన విషయం : మూడు వేదాల్లోనూ పేర్కొనబడిన పై గాయత్రీ మంత్రం ఎంత మహిమాన్వితమైనదో అథర్వవేద మంత్రం మనకు బోధిస్తుంది. చూడండి.

ఓం స్తుతా మయా వరదా వేదమాతా ప్రచోదయంతాం

పావమానీ ద్విజానాం ఆయుః ప్రాణం ప్రజాం పశుం

కీర్తిం ద్రవిణం బ్రహ్మ వర్చసమ్ ।
మహ్యం దత్వా ప్రజత బ్రహ్మలోకమ్ ॥
-అథర్వ. 19-71-1

(ప్రచోదయ అంతాం) 'ప్రచోదయాత్' పదం అంతమందు కలిగి (గాయత్రీ మంత్రంలో 'ప్రచోదయాత్' పదం చివరలో ఉంది) (ద్విజానాం) ద్విజులను - రెండు జన్మలు గలవారిని (తల్లిదండ్రులిచ్చిన జన్మ ఒకటి, గురుకులంలో ఉండి వేదాది శాస్త్రాలను అధ్యయనం చేసి విద్యాబుద్ధులు గ్రహించి జ్ఞానవంతుడై గురుకులం నుండి బయట పడడం రెండవజన్మ) (పావమానీ) పవిత్ర పరచు వేదమాత - నాలుగు వేదాలకు సారభూతమయిన గాయత్రి (ఆయుః) దీర్ఘాయువును (ప్రాణం) ప్రాణము - ఆత్మ బలమును (ప్రజాం) మంచి సంతానమును (పశుం) గోవు మొ॥ పశువులను (కీర్తిం) కీర్తి ప్రతిష్ఠలను (ద్రవిణం) ధనాది ఐశ్వర్యమును (బ్రహ్మ వర్చసమ్) వేదజ్ఞాన ప్రకాశమును, యోగాభ్యాసాదుల ద్వారా పొందబడు బ్రహ్మ వర్చస్సును (మహ్యందత్వా) నాకు యిచ్చి అనంతరం (బ్రహ్మలోకం ప్రజత) బ్రహ్మలోకం - ముక్తి ధామమునకు చేర్చునది యగును గాక ! అట్టి (వరదా వేదమాతా) వరముల నిచ్చు వేదమాత గాయత్రి (స్తుతామయా) నా చేత స్తుతింపబడుచున్నది.

గాయత్రిలో 27 భగవన్నామాల అర్థం యిమిడి ఉంది : గాయత్రీ మంత్రం చిన్నదయినా గొప్ప అర్థం ఇందులో యిమిడి ఉంది. దీనిలో 27 భగవన్నామాల అర్థం యిమిడి ఉంది 'ఓం'లో పది భగవన్నామాల అర్థం, దేవస్య - 'దేవ' పదంలో పదినామాల అర్థం. మిగిలిన ఏడు - భూః, భువః, స్వః, తత్, సవితుః, వరేణ్యమ్, భర్గః పదాల అర్థం కలిసి మొత్తం 27 నామాల అర్థం ఇందులో యిమిడి ఉంది.

'ఓం'లో ఇమిడి ఉన్న విశేషార్థం : 'తస్య వాచకః ప్రణవః' - యో. ద. 1-27 పరమేశ్వరుని ప్రధాన నామం ఓం. ప్రతి వేదమంత్రం ఓంతో మొదలయి ఉచ్చరించ బడుతుంది. ఓంకారము మాటలురాని మూగవారు కూడ ఉచ్చరించుటకును, స్మరించుటకును అనువైన సరళ భగవన్నామం. నిరంతర ఓంస్మరణం వల్ల సాధకుని ప్రాణములు ఊర్ధ్వగతి చెంది సమాధి స్థితిని పొందడానికి వీలవుతుంది. పరమేశ్వరుని సర్వోత్తమనామమైన ఓంలో అ, ఉ, మ్ అనే మూడక్షరాలు మిళితమై ఉన్నాయి. నోరు పూర్తిగా తెరచి ధ్వనిచేస్తే 'అ' పలుకుతుంది. నోరు సగం మూసి ధ్వచేస్తే 'ఉ' పలుకుతుంది. నోరు పొంతం మూసి ధ్వనిచేస్తే 'మ్' పలుకుతుంది. ఓం శబ్దం పూర్తిగా ఉచ్చరించ డానికి మొదట నోరు తెరవాలి, సగం మూయాలి, క్రమంగా నోరు పొంతం మూయాలి అపుడు ఓం శబ్దం పలుకుతుంది. కనుక అకార, ఉకార, మకారముల మిళితమే 'ఓం' అయింది. ఒక విధంగా చెప్పాలంటే 'అ' మొదలు 'హ' వరకు గల సమస్త ధ్వనికాస్త్రం - ప్రపంచంలోని మనుష్యుల బిన్న భిన్న భాషలు, పశువుల అఱపులు, పక్షుల కిలకిలారాపములు, క్రిమి కీటకాలు చేసే సూక్ష్మ ధ్వనులు అన్నీ ఈ ఓంలో మిళితమై ఉన్నాయి.

ఓంలోని అకారం జగత్ సృష్టికి చిహ్నం. ఉకారం - స్థితికి గుర్తు. మకారం జగత్ లయానికి సంకేతం. ఈ మూడు కలిసిన ఓంకారం జగత్ సృష్టి, స్థితి, లయాలకు కర్త అయిన పరమేశ్వరుని ఉత్తమ నామమయింది.

ఓంలోని అకారం - జాగ్రదవస్థకు, ఉకారము - స్వప్నావస్థకు, మకారం - సుషుప్తి అవస్థకు, ఈ మూడూ కలిసిన ఓంకారం సమాధి అవస్థకు సంకేతాలు.

ఓంకార గర్భితమైన ఈ 'అ'కార 'ఉ'కార 'మ'కారాలకు ఒక్కొక్కదానికి మూడేసి భగవన్నామాలున్నట్లు వేదాది సత్యశాస్త్రాలు స్పష్టంగా వ్యాఖ్యానించినాయని మహర్షి దయానందులు సత్యార్థ ప్రకాశం మొదటి సముల్లాసంలో పేర్కొన్నాడు. 'అ'కారము - విరాట్, అగ్ని, విశ్వుడు మొ॥ నామాలను, 'ఉ'కారము - హిరణ్య గర్భ, వాయు, తైజసాది నామాలను, 'మ'కారం - ఈశ్వర, ఆదిత్య, ప్రాజ్ఞాది భగవన్నా మములను తెల్పుతున్నాయి. అకార, ఉకార, మకారాలకున్న తొమ్మిది నామార్థాలు. ఓంకారమున కున్న ప్రత్యేక అర్థం కలిసి మొత్తం పది భగవన్నామాల అర్థం ఓంలో ఇమిడి ఉంది.

యజ్ఞోపవీతం ఓంకార బోధకం : యజ్ఞోపవీతం (జంధ్యం) ఓంకార బోధక మనవచ్చును. యజ్ఞోపవీతంలో 3 పెద్ద పోగులుంటాయి. అవి అకార, ఉకార, మకారములకు గుర్తు. ఈ పెద్ద పోగులలో ఒక్కొక్కదానికి మళ్ళీ మూడు సన్నని దారాలుంటాయి మొత్తం యజ్ఞోపవీతంలో మూడుమూళ్ళు తొమ్మిది సన్నని దారాలుంటాయి. ఈ తొమ్మిది సన్నని దారాలు అకార, ఉకార, మకారాలకు గల 9 భగవన్నామాలకు సంకేతం. యజ్ఞోపవీతం లోని మూడు పెద్దపోగులను కలిపే ముడి అకార ఉకార మకారాలను గల 9 భగవన్నామాలకు సంకేతం. యజ్ఞోపవీతం లోని మూడు పెద్దపోగులను కలిపే ముడి అకార ఉకార మకారాలను సమన్వయ పరచు

ఓంకారమనవచ్చును. ఇలా యజ్ఞోపవీతం ఓంకార బోధకమనవచ్చును.

ఇక గాయత్రీ మంత్రంలోని దేవస్య – దేవ శబ్దంలో కూడ 10 నామార్థాలున్నాయి. 'దేవ' శబ్దం – 'దివు' క్రీడా, విజిగీష వ్యవహార ద్యుతిస్తుతి మోదమద స్వప్న కాంతి గతిషు, అనే ధాతువు నుండి ఏర్పడింది. ఈ ధాతువు లోని పది పదాలు పది భగవన్నామాల అర్థాన్ని స్తున్నాయి. ఓంకారంలోని పది నామార్థాలకు, దేవశబ్దంలోని పది నామాలకు అర్థం క్రింద వరుసగా యిస్తున్నాను.

1) ఓం – (అవతీత్యోమ్) జగత్తును రక్షించువాడు గనుక భగవంతుడు ఓంపద వాచ్యుడు.

అకారములోని 3 నామాలు :

2) విరాట్ – వివిధ – బహు ప్రకారమగు జగత్తును ప్రకాపరచుటవలన అతడు విరాట్.

3) అగ్ని – అతడు జ్ఞాన స్వరూపుడు, సర్వజ్ఞుడు, తెలియుటకు పొందుటకు పూజింప బడుటకును యోగ్యుడు.

4) విశ్వడు – అతనియందు ఆకాశాది సమస్త భూతములు ప్రవేశించుచున్నవి. లేక అతడు వీనియందు వ్యాప్తుడై ప్రవిష్టుడగు చున్నాడు గనుక పరమేశ్వరుడు విశ్వుడు.

ఉకారములోని 3 నామాలు :

5) హిరణ్యగర్భుడు : అతనియందు సూర్యాది తేజోవంతములగు లోకములు ఉత్పన్నమై అతని ఆధారమందుండును. లేక అతడు సూర్యాది లేజ స్వరూప పదార్థముల గర్భము అనగా ఉత్పత్తి స్థానము, నివాసము.

6) వాయువు – అతడు చరాచర జగత్తును ధరించి జీవింపజేసి లయింప జేయువాడును, బలవంతుల కంటె బలవంతుడు అగుటచే వాయువు.

7) తైజసుడు – తాను స్వయం ప్రకాశకుడై సూర్యాది తేజోవంతములగు లోకములను ప్రకాశపరచు వాడగుటచే భగవంతుడు తైజసుడు.

మకారములోని 3 నామములు :

8) ఈశ్వరుడు – అతనికి సత్యవిచారశీల జ్ఞానమును, అనంత ఐశ్వర్యమును కలదు గనుక ఈశ్వరుడు.

9) ఆదిత్యుడు – ఎవని కెన్నటికిని వినాశముకలుగదో అతడు ఆదిత్యుడు.

10) ప్రాజ్ఞుడు – అతడు నిర్భ్రాంతుడను, జ్ఞాన యుక్తుడును, సమస్త చరాచర లోక వ్యవహారమును ఉన్నదున్నట్లు తెలిసికొను వాడును కనుక ప్రాజ్ఞుడు.

దేవ శబ్దంలోని పది నామార్థాలు :

11) క్రీడా – శుద్ధమగు జగత్తును క్రీడింప జేయువాడు, తన స్వరూపమందు తానే ఆనందముతో క్రీడించువాడు, లేక పరసహాయము లేక తన సహజ స్వభావముచే క్రీడవలె సమస్త జగత్తును చేయువాడు లేక సమస్త క్రీడలకు ఆధారమగువాడు దేవుడు.

12) విజిగీషా – ధార్మికులు జయింప వలయునను యిచ్ఛగలవాడు. అందఱను జయించువాడు తాను అజేయుడు (జయింప శక్యము కానివాడు)

13) వ్యవహార – అన్ని ప్రయత్నములకు సాధన ఉపసాధనముల నిచ్చువాడు. న్యాయ అన్యాయ రూప వ్యవహారములను తెలియు వాడును, ఉపదేష్టయు కనుక అతడు దేవుడు.

14) ద్యుతి – స్వయం ప్రకాశ రూపుడును అన్నిటికి ప్రకాశకుడును అగుటచే అతడు ద్యుతి.

15) స్తుతి – ఎల్లర ప్రశంసకు యోగ్యుడు నిందింప తగనివాడు.

16) మోద – తాను ఆనంద స్వరూపుడై ఇతరులకు ఆనందము నిచ్చువాడు, దుఃఖము లేశమును లేనివాడు.

17) మద – మదోన్మత్తులను తాడించు వాడు, సదాహర్షితుడు, శోకరహితుడు, ఇతరులను హర్షింప – సంతోషింప జేయు వాడు. దుఃఖముల నుండి దూరము చేయు వాడు.

18) స్వప్న – అందఱి శయ నార్థము రాత్రిని, ప్రలయమును చేయువాడు, ప్రలయ సమయమున అవ్యక్తమందు – ప్రకృతియందు సమస్త జీవులను నిద్రింపజేయువాడు.

19) కాంతి – కామించుటకు – కోరుటకు యోగ్యుడు, సత్యకాముడు, శిష్టుల కామము నకు లక్ష్యమగువాడు.

20) గతి – జ్ఞాన స్వరూపడగుటచే గతి. అన్నిటియందును వ్యాప్తుడై, తెలియుటకు యోగ్యుడగువాడు గనుక భగవంతుడు గతి.

గాయత్రీ మంత్రంలోని మిగిలిన 7 నామాలకు అర్థం :

21) భూః – భూత భవిష్యత్ వర్తమాన ములను మూడు కాలాల్లో నిరంతరం ఉండే వాడు. సమస్త ప్రాణులను చేష్టింపజేయు ప్రాణశక్తి, ప్రాణాధారుడు.

22) భువః – ముముక్షువులకు (మోక్షం కోరేవారికి), ముక్తలకు, భగవద్భక్తులకు, ధర్మాత్ములకు దుఃఖం తొలగించువాడు, తాను స్వయంగా దుఃఖ రహితుడు.

23) స్వః – ప్రాణాది సకల జగత్తు నందును వ్యాపించి వానిని చేష్టింపజేయు వాడు ఆనంద స్వరూపుడు, తనను ఉపాసించు వారికి ఆనందాన్నిచ్చేవాడు.

24) తత్ – ఇంద్రియాలకు అందక పరోక్షంగా ఉండేవాడు. దిగంతములవరకు వ్యాపించినవాడు.

25) సవితః – సమస్త జగదుత్పాదకుడు. సంపూర్ణ ఐశ్వర్యశాలి.

26) వరేణ్యమ్ – అన్నింటి కంటె ఉత్త ముడు, ప్రేమింపదగినవాడు పొందుటకు యోగ్యుడు.

27) భర్గః – పాపరూప దుఃఖ మూలము లను నశింపజేయు ప్రభావశాలి, తేజస్వరూ పుడు, ఉపద్రవము – కష్టము – హాని లేనివాడు, పాప రహితుడు, నిర్గుణుడు, శుద్ధుడు, సకల దోష రహితుడు పక్వం – పూర్ణుడు, పరమార్థ విజ్ఞాన స్వరూపుడు గనుక అతడు భర్గః.

ఇటువంటి గుణ కర్మ స్వభావాలు కలిగిన ఆ పరమేశ్వరుణ్ణి మేము నిత్యం మా హృదయాల్లో ధ్యానిస్తాము. ఆ పరమేశ్వరుడు మా బుద్ధలను వికసింపజేసి – మా జ్ఞానాన్ని, ధారణ శక్తిని పెంచి మేము సదా మా ఉన్నతి కనుగుణమైన సత్కర్మలను – లోకోపకారక సత్కర్మలను ఆచరించి పరమ పురుషార్థమైన మోక్షమును పొందునట్లు అనుగ్రహించుగాక అని ఈ గాయత్రీ మంత్రంలో భగవంతుని ప్రార్థించడం జరుగుతుంది.

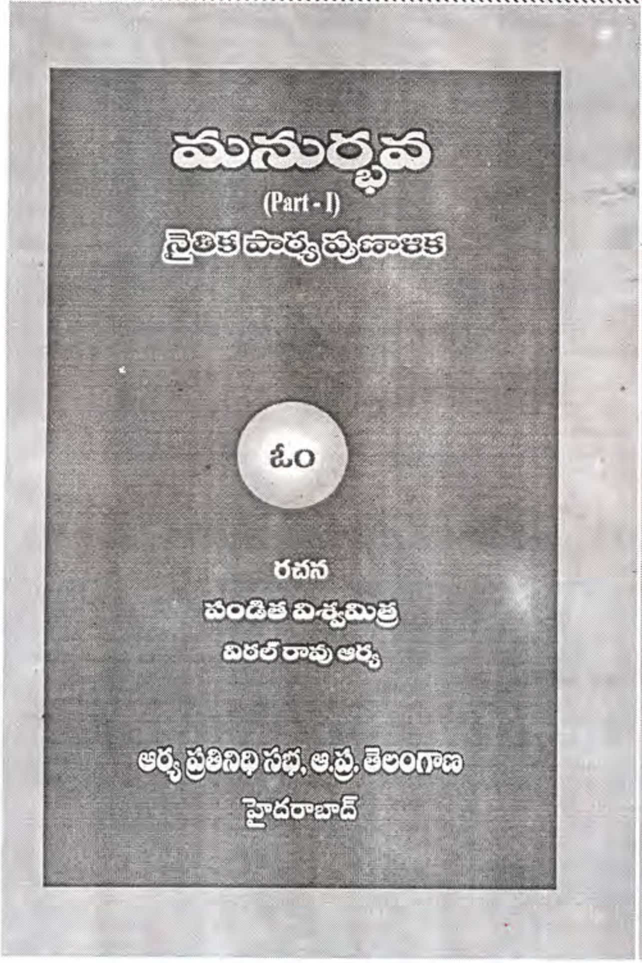

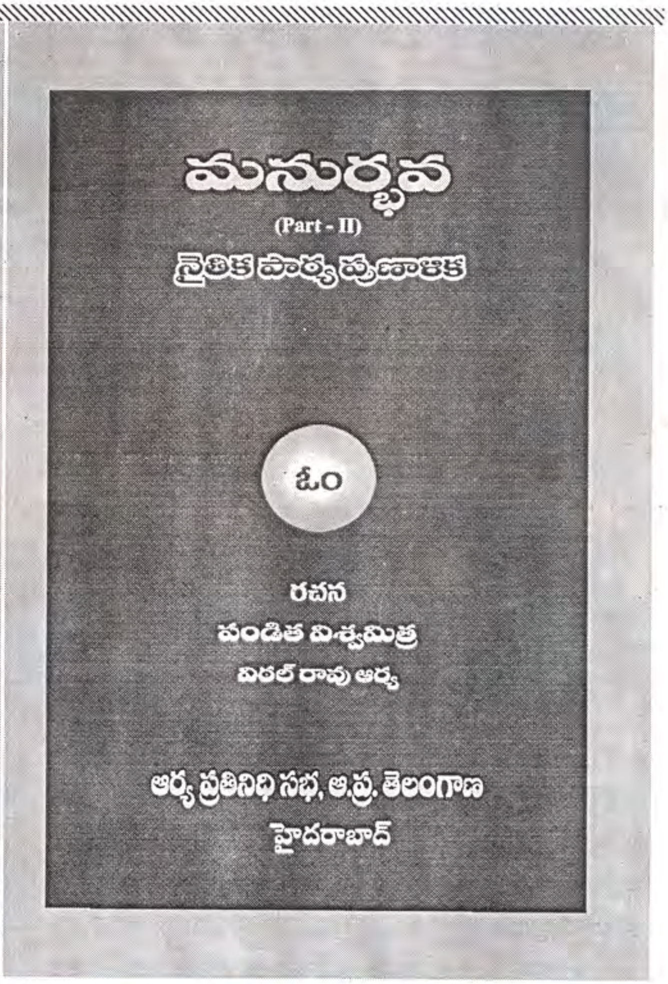

ఆధునిక యాంత్రిక యుగములో విద్యార్థుల నైతిక విలువలను పెంపొందించడానికి పండితుల ద్వారా శిశు నుండి ఏడవ తరగతి వరకు పాఠ్యప్రణాళికను రూపొందించడం జరిగినది. ఈ పాఠ్యప్రణాళిక ద్వారా విద్యార్థుల బౌద్ధిక వికాసాన్ని మరియు వైదిక సంస్కృతి యొక్క ఔన్నత్యాన్ని కోరుకుంటూ ఆచరణాత్మక నిర్మాణం కొరకు

శ్రీ పండిత విశ్వమిత్ర గారు మరియు ప్రొ॥ విఠల్ రావు ఆర్య గారు రచించిన

"మనుర్భవ" పుస్తకములను (1-4 భాగాలను)

ఆర్యప్రతినిధి సభ ఆ.ప్ర.-తెలంగాణ ద్వారా సప్తమ ముద్రణ చేయించి దీపావళి పర్వదినమున ఆవిష్కరణ సభాధ్యక్షుల ద్వారా చేయబడినది.

ఈ సందర్భమున ఈ రెండు పుస్తకాలకు 20 శాతం తగ్గింపు మకరసంక్రాంతి వరకు ఇవ్వడం జరుగుతున్నది. కావున జనులు అధిక సంఖ్యలో ఈ సదవకాశాన్ని సద్వినియోగ పరచుకొనగలరు.

Dateof Publication 2nd & 17th of every Month, Date of posting 3rd & 18th of every month
आर्य जीवन 18-11-2018 Registered-Reg. No. HD/783/2018-20 RNI No. 52990/93

To,

ఆర్య జీవన్
హిందీ - తెలుగు ద్విభాషా పక్ష పత్రిక
Editor : **Vithal Rao Arya**, M.Sc. LL.B., Sahityaratna
Arya Prathinidhi Sabha AP-Telangana, Sultan Bazar, Hyderabad-95.
Phone No. 040-24753827, 66758707, Fax : 040-24557946
Annual subscription Rs. 250/- సంపాదకులు - విఠల్ రావు, మంత్రి సభ

महर्षि दयानंद सरस्वती का 135वाँ निर्वाण दिवस मनाया गया

हैदराबाद, 8 नवंबर-(मिलाप ब्यूरो)
आर्य प्रतिनिधि सभा, सुल्तान बाज़ार के तत्वावधान में महर्षि दयानंद सरस्वती का 135वाँ निर्वाण दिवस मनाया गया।

पर्व यज्ञ के साथ निर्वाण दिवस कार्यक्रम का शुभारंभ हुआ। यज्ञवेदी पर सभा के प्रधान ठा. लक्ष्मण सिंह, उप-प्रधान पं. हरिकिशन वेदालंकार, आचार्य वेदश्रवा एवं आचार्य अरविंद शास्त्री आसीन हुए। यज्ञ के उपरांत उप-मंत्री रामचंद्र कुमार, जयव्रत एवं डॉ. वीरेन्द्र कुमार ने प्रभु भक्ति एवं महर्षि दयानंद के प्रशस्ति गीतों का गायन किया। इसके बाद ठा. लक्ष्मण सिंह की अध्यक्षता में निर्वाण दिवस पर आधारित सभा हुई। इसमें आचार्य विश्वश्रवा, अरविंद शास्त्री, जगन्मोहन ने महर्षि दयानंद के जीवन पर प्रकाश डाला।

अवसर पर सार्वदेशिक आंध्र प्रादेशिक सभा, दिल्ली एवं प्रांतीय सभा के महामंत्री विट्ठल राव आर्य ने अपने संबोधन में केंद्र सरकार से माँग की कि भारतीय समाज की पारिवारिक व्यवस्था को तोड़ने वाले प्रयत्नों को रोकना चाहिए। लक्ष्मण सिंह आर्य ने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि महर्षि दयानंद वेदोद्धारक महापुरुष थे। वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए उन्होंने अनुपम वैदिक साहित्य का सृजन किया। आर्य समाज के नियमों के माध्यम से वेद को पढ़ने-पढ़ाने, सुनने-सुनाने, सत्य को ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने की प्रेरणा दी। भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के वे प्रथम उद्घोषक थे। अंत में विट्ठल राव आर्य ने छात्रोपयोगी नैतिक शिक्षा की पुस्तकों 'मनुर्भव भाग-1 और 2' का लोकार्पण किया। यह पुस्तकें प्राथमिक शिक्षा से 7वीं तक पाठ्यक्रम में शामिल हैं। इसके

लेखक पं. विश्व मित्र एवं विट्ठल राव आर्य हैं। सभा का संचालन पं. हरिकिशन वेदालंकार ने किया। कार्यक्रम में क्रांति कुमार कोरटकर, आर. सत्यनारायण रेड्डी सहित विभिन्न आर्य समाजों के पदाधिकारी, कार्यकर्ता एवं अन्य लोग उपस्थित थे।

THE VIEWS & THE NEWS PUBLISHED IN THIS ISSUE MAY NOT NECESSARILY BE AGREEABLE TO THE EDITOR
Editor : Vithal Rao Arya • Email : acharyavithal@gmail.com, Mobile : 09849560691
సంపాదకులు : శ్రీ విఠల్‌రావు మంత్రి సభ, ఆర్యప్రతినిధి సభ ఆ.ప్ర.-తెలంగాణ, సుల్తాన్‌బజార్, హైదరాబాద్-95. Ph: 040-24753827, Email : acharyavithal@gmail.com
संपादक : श्री विट्ठलराव मंत्री सभा ने सभा की ओर से आकृति प्रिन्टर्स में मुद्रित करवा कर प्रकाशित किया ।
प्रकाशकः आर्य प्रतिनिधि सभा आं.प्र.-तेलंगाना, सुल्तान बाज़ार, हैदराबाद तेलंगाना-95.